अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष- 43, अंक- 17, 16-30 अप्रैल 2020

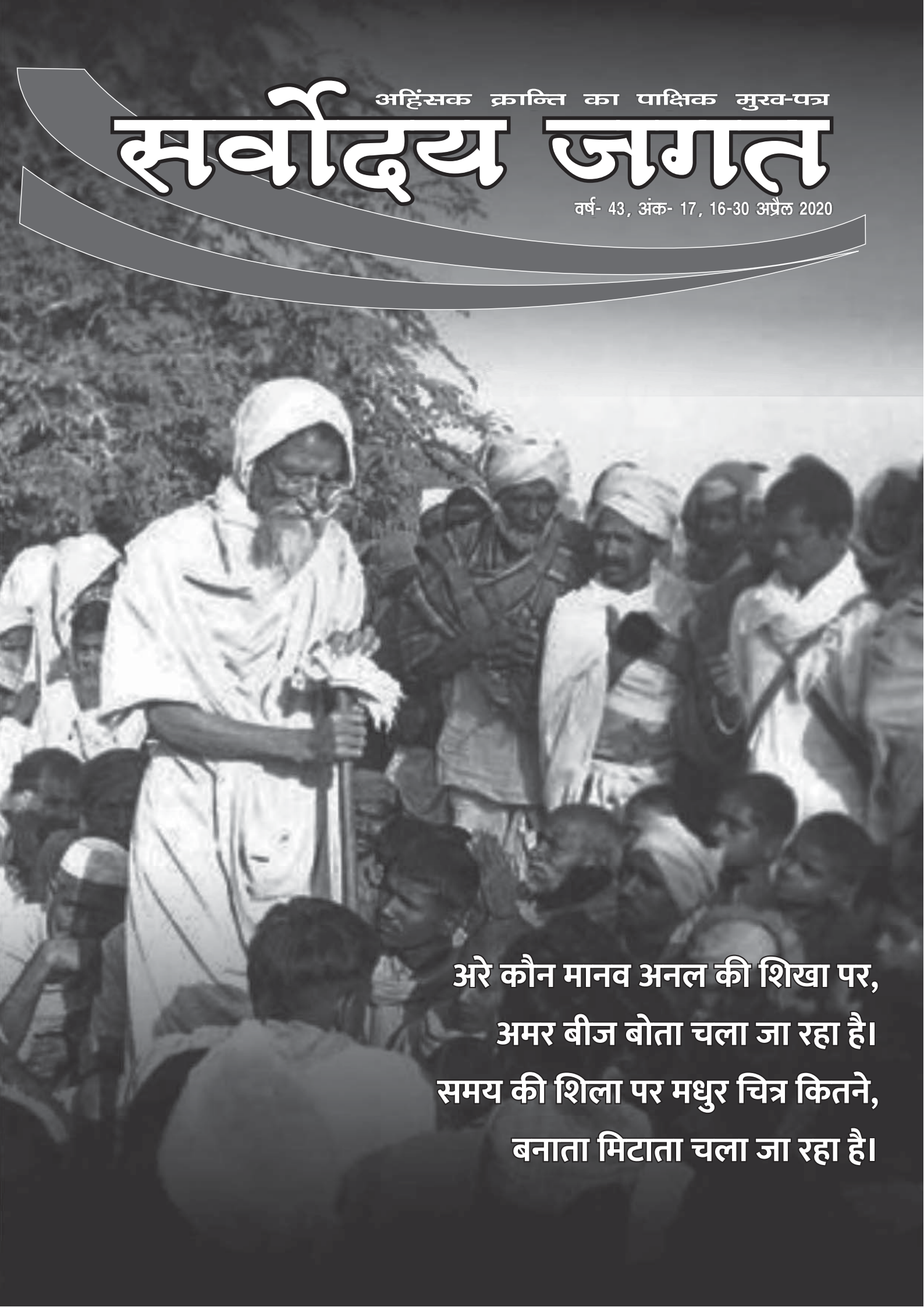

अरे कौन मानव अनल की शिखा पर,
अमर बीज बोता चला जा रहा है।
समय की शिला पर मधुर चित्र कितने,
बनाता मिटाता चला जा रहा है।

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित
अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 43, अंक : 17, 16-30 अप्रैल 2020

अध्यक्ष
महादेव विद्रोही

संपादक
बिमल कुमार
सहसंपादक
प्रेम प्रकाश
09453219994
संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'
प्रो. सोमनाथ रोडे अरविन्द अंजुम,
रमेश ओझा अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

एक प्रति	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. धन, धरती बंट के रहेगी... 3
3. अध्यक्ष की कलम से... 5
4. ग्रामस्वराज्य धरती पर क्यों नहीं उतरा... 7
5. स्मृति एवं पुराण में भूमिदान महिमा... 10
6. बुंदेलखंड के लोक साहित्य में भूदान... 10
7. कोरोना वायरस के बाद की दुनिया... 11
8. लॉकडाउन के कारण ध्वस्त होगी कृषि... 15
9. ऑल आउट लॉकडाउन के खतरे... 16
10. उपन्यास - 'बा'... 17
11. दुनिया के वे देश, जहां नहीं पहुंचा है... 19
12. गतिविधियां एवं समाचार... 19
13. कविता... 20

संपादकीय

भूमि समस्या

भूदान-ग्रामदान आंदोलन की भूमिका

भूदान आंदोलन को तीन स्तरों पर समझना होगा। एक भूमि समस्या के समाधान के संदर्भ में, दूसरे स्वामित्व विसर्जन की रणनीति के रूप में तथा तीसरे नये समाज के निर्माण की आधारशिला की अवधारणा के रूप में।

भूमि समस्या-औपनिवेशिक काल

भारत में भूमि समस्या, अंग्रेजी शासन की देन थी। अंग्रेजी शासन के पूर्व तक खेती एवं गांव में स्वामित्व का स्वरूप बिल्कुल भिन्न था। जमीन कोई निजी सम्पत्ति नहीं होती थी। जो खेती करते थे, उनका खेती करने का अपरिवर्तनीय अधिकार (Inalienable Right) था, जमीन उनकी सम्पत्ति नहीं होती थी। और खेती की उपज पर गांव के अन्य वर्गों का भी सुनिश्चित अधिकार होता था—जैसे लोहार, बढ़ई, चर्मकार, कुम्भकार, बुनकर आदि-आदि। राजसत्ता भी जमीन पर नहीं, बल्कि उपज का एक हिस्सा लगान के रूप में लेती थी।

अंग्रेजों ने आने के बाद भूमि व्यवस्था में दूरगामी परिवर्तन किया। एक, जमीन को सम्पत्ति में परिवर्तित कर दिया। दूसरा, खेती करने वाले को काश्तकार या रैय्यत (tenant) बना दिया। तथा तीसरे, लगान उपज पर लेने के बजाय, जमीन की इकाई पर लेना शुरू कर दिया।

जमीन को सम्पत्ति बनाने के काम को जमींदारी व्यवस्था को लागू करके मूर्त रूप दिया गया। अंग्रेजों को भारत की भूमि व्यवस्था का ज्ञान नहीं था। उन्होंने अपने देश की सामंती व्यवस्था में निहित स्वामित्व के स्वरूप को लागू करने के लिए, उससे मिलती-जुलती व्यवस्था (जमींदारी प्रथा) को भारत में लागू किया। स्मरण रहे कि यह भारत में किसी सामंती व्यवस्था (Feudalism) का उदय नहीं था। क्योंकि इनका स्वायत्त राजनीतिक प्रभुत्व लगभग शून्य था। वस्तुतः, अंग्रेज भारत के गांवों का शोषण व दोहन करना चाहते थे। उस काल में यह दोहन बाजार के माध्यम से संभव नहीं था, क्योंकि भारत के गांव काफी हद तक आत्मनिर्भर होते थे तथा गांव में होने वाले उत्पादन का अधिकांश भाग गांव में ही खप जाता था। गांव के उत्पादन के अतिरेक (surplus) का वितरण गांव में ही हो जाने के कारण गांव में खुशहाली थी। इस अतिरेक (surplus) का दोहन करने के लिए जमींदारी प्रथा थोपी गयी। इसका बाह्य रूप सामंती था, किन्तु इसकी आंतरिक संरचना ऐसी थी, जिसमें जमींदार अंग्रेजों की कृपा पर निर्भर करते थे। इनका मुख्य कार्य लगान (राजस्व) आदि के माध्यम से गांव का शोषण व दोहन करना था। इस अतिरेक (surplus) के दोहन से ही ब्रिटिश साम्राज्य तथा ब्रिटिश पूंजीवाद का प्रारम्भिक दौर फला-फूला। इस कारण यह कहना ही उचित होगा कि जमींदारी कोई सामंती व्यवस्था नहीं थी, बल्कि एक औपनिवेशिक व्यवस्था थी, जिसके माध्यम से गांव का शोषण व दोहन हुआ एवं जो व्यवस्था गांव के आत्मनिर्भर स्वरूप को नष्ट करने का माध्यम बनी। इसी व्यवस्था के माध्यम से जमीन को सम्पत्ति में परिवर्तित कर, जमीन से जुड़े श्रम का अतिशोषण किया जा सका।

जमीन पर से किसान का अधिकार खत्म होने के बाद, किसान काश्तकार एवं रैय्यत में तब्दील हो गया। समय के साथ किसान से वसूले जाने वाले लगान की दर बढ़ती गयी। दूसरी बात, काश्तकारों की भी कई श्रेणियां बनती गयीं। कुछ काश्तकारों के काश्तकारी के अधिकार सुरक्षित किये गये। लेकिन बड़ी संख्या में ऐसे काश्तकार थे, जिनके कोई अधिकार नहीं थे, इन्हें Tenants at-will कहते थे। इनकी काश्तकारी, जमींदार या किसी बड़े सुरक्षित काश्तकार की दया पर निर्भर थी, जो इन्हें कभी भी बेदखल कर सकते थे। यही कारण है कि जब कभी काश्तकारों की सुरक्षा के नाम पर नये कानून आये, ये दया-निर्भर असुरक्षित काश्तकार बेदखल कर दिये गये। जमींदारी लागू होने के समय से ही सन् 1939-40 तक कई दौर में ऐसे किसानों को बेदखल करने का सिलसिला बना रहा। किसानों की, खेती से व्यापक स्तर पर बेदखली की प्रक्रिया के साथ ही, गांव एक अन्य कारण से भी उजड़ते चले गये। यह था ग्रामोद्योगों एवं हस्तशिल्प का तीव्र ह्रास। इस कारण बड़ी संख्या में कारीगर एवं अन्य ग्रामीण कर्मकार बेरोजगार होकर कृषि मजदूर बनते चले गये।

धीरे-धीरे अंतर्राष्ट्रीय बाजार द्वारा नियंत्रित स्थानीय बाजार की पैठ बढ़ती गयी। और ऊपर वर्णित प्रक्रियाओं के फलस्वरूप, जमीन और श्रम, बाजार के दायरे में खरीद-फरोख्त की वस्तु बनते चले गये।

स्वाभाविक ही था कि आजादी की लड़ाई में जैसे-जैसे किसानों की भागीदारी बढ़ती गयी, वैसे-वैसे इन औपनिवेशिक व्यवस्थाओं का विरोध भी बढ़ता गया। जमींदारी प्रथा खत्म हो, किसान जोतने के अधिकार से वंचित न हो, जमीन व श्रम, बाजार के अधीन खरीद-फरोख्त की वस्तु न बने—ये मांगें सैद्धांतिक रूप भी

लेती गयीं। इसीलिए माना गया कि आजादी के बाद भूमि समस्या का समाधान, इन प्रश्नों का भी समाधान करेगा एवं नये समतामूलक समाज के निर्माण में भी इन नीतियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी।

आजादी के बाद

आजादी मिलने के बाद भूमि समस्या के संदर्भ में तीन प्रकार के प्रयास दिखे—सरकारी, वामपंथी व समाजवादी आंदोलनों द्वारा तथा भूदान आंदोलन के द्वारा। सरकारी नीति का प्रभावी पक्ष जमींदारी उन्मूलन था। किन्तु भूमि के समान वितरण या जोतने-बोने वालों का अधिकार खेती में सुनिश्चित हो, इस दिशा में सरकारी प्रयास बेहद कमजोर थे। हदबंदी एवं भूमि-वितरण के कार्यक्रम बहुत देर से तथा बहुत कम को लाभ देने वाले साबित हुए।

वामपंथी तथा समाजवादी आंदोलन का मुख्य फोकस लघु, सीमांत किसानों, बटाईदारों एवं भूमिहीन कृषि मजदूरों को एकजुट कर गांव के अंदर के शोषण को चुनौती देना था। बड़े किसान एवं पूर्व जमींदार इनके मुख्य निशाने पर थे। इनका लक्ष्य समतावादी समाज का निर्माण था, किन्तु गांव समता व स्वराज्य की बुनियादी इकाई कैसे बनेंगे, यह स्पष्ट नहीं था। एक बड़ी कमी बटाईदारी के स्वरूप को समझने की भी थी। वे बटाईदारी के खिलाफ इस तरह लड़ रहे थे, जैसे यह कोई अर्धसामंती व्यवस्था थी। जबकि यह नये तरह का श्रम संबंध (Labour relationship) था। एक तरह का कन्ट्रैक्ट, जिसमें पूरे काम का ठेका उपज में हिस्से के आधार पर दिया जाता है। बटाईदार, श्रमिक ही रहता है, काश्तकार या रैय्यत नहीं बनता। यह अविकसित बाजार व्यवस्था में श्रम का शोषण करने का माध्यम है। ऐसे संबंध अन्य असंगठित क्षेत्रों में भी पाये जाते हैं। लेकिन ये बंद व्यवस्था का हिस्सा नहीं हैं। वैश्विक पूंजीवादी बाजार, पिछड़े क्षेत्रों से अतिरेक को किस तरह चूसता है, उसकी संरचना के ऐसे नमूने तमाम पिछड़े व अति पिछड़े क्षेत्रों में देखे जा सकते हैं। पिछड़े व अति पिछड़े क्षेत्रों में, वैश्विक पूंजीवाद के एक विशिष्ट रूप के खिलाफ लड़ाई को, अर्धसामंतवाद के खिलाफ लड़ाई समझने के कारण, वैश्विक पूंजीवाद के खिलाफ लड़ाई की निरंतरता बनाये रखने तथा सभी प्रकार के श्रमिकों को जोड़ने की रणनीति बनाने में वे असफल रहे। सच्चाई यह है कि उनके द्वारा मानी गयी अर्धसामंती व्यवस्था की समाप्ति के बाद, गांव में संघर्ष का स्वरूप क्या होगा, यह भी स्पष्ट नहीं था।

अब एक तीसरी धारा का जिक्र करें। भूदान-ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य आंदोलन, अहिंसा की विधायक शक्ति को प्रकट करने तथा अहिंसक लोकसत्ता के निर्माण का एक व्यापक प्रयोग था। भू-दान आंदोलन केवल भूमि और श्रम के बीच के संबंधों को ही नये सिरे से परिभाषित करने का आंदोलन नहीं था, या भूमि और श्रम को बाजार के दायरे से बाहर लाने का ही आंदोलन नहीं था। बल्कि साथ ही ये नये मनुष्य के निर्माण का भी आंदोलन था। पूंजीवादी व्यवस्था की सफलता लोभ और भोग की प्रवृत्ति को बढ़ाने में है। हर किसी के निजी स्वार्थ के बढ़ने से पूंजीवादी बाजार का संतुलन बना रहेगा, यह उसकी मूल मान्यता है। इसके विपरीत भूदान आंदोलन सामूहिक सहयोग तथा सबको आवश्यकतानुसार वितरण की बात को स्वीकारता था। मार्क्स ने भी कहा था, "To each according to his need and from each according to his ability." नये समाज के निर्माण में भूमि-श्रम संबंध भी बदलें तथा नये मूल्यों, नयी मान्यताओं से प्रेरित मनुष्य नये सामाजिक ढांचे का भी निर्माण करें—ये दोनों पक्ष महत्त्वपूर्ण थे। जिन गांवों में भूदान हुआ, उन गांवों में 90 प्रतिशत से 100 प्रतिशत लोगों के बीच एक न्यूनतम सर्व सहमति बनाने का कार्य भी हुआ। इस सर्व सहमति में यह भी निहित था कि बाजार द्वारा, विशेषकर वैश्विक पूंजीवादी बाजार द्वारा शोषण का निषेध हो तथा स्वदेशी व शरीर श्रम प्रतिष्ठा द्वारा ग्राम स्वराज्य की ओर बढ़ें। ग्रामदान के द्वारा यह सुनिश्चित किया गया कि लगान (भू-राजस्व) पूरे गांव पर लगे, व्यक्तिगत भू-स्वामियों पर नहीं। यह व्यक्तिगत स्वामित्व विसर्जन की दिशा में एक बड़ा कदम था।

भूदान-ग्रामदान आंदोलन की इन प्रारम्भिक उपलब्धियों के बावजूद सन् 1967 आते-आते, परिवर्तन का चक्र धीमा पड़ने लगा। इसके मुख्यतः तीन कारण थे। एक यह कि ग्राम स्वराज्य का आंदोलन केवल ग्राम स्तर का ही नहीं हो सकता था। यह जरूरी था कि यह ग्राम गणराज्य की स्थापना की ओर बढ़ता। अर्थात् सारे भूदानी-ग्रामदानी गांवों के एक परिसंघ का निर्माण कर ग्राम स्वराज्य की शक्ति के व्यापक परिचय का भी आधार बनाया जाता। वैश्विक पूंजीवादी बाजार का मुकाबला अलग-अलग गांव अकेले-अकेले नहीं कर सकते थे। ग्राम स्वराज्य के पक्ष में तथा वैश्विक पूंजीवादी बाजार के खिलाफ व्यापक आंदोलन की रणनीति बनाने की भी जरूरत थी, जिसमें लोक कल्याणकारी पब्लिक सेक्टर, लघु व कुटीर उद्योग तथा ग्रामस्वराज्य की शक्तियां एकजुट हो पातीं। अर्थात् ग्रामस्वराज्य को व्यापक स्वदेशी आंदोलन के साथ जोड़ना चाहिए था।

दूसरा कारण था, जिन शक्तियों से स्वदेशी व ग्राम स्वराज्य का अभियान कमजोर पड़ता था, उनके विरुद्ध सत्याग्रह न करना। ग्राम स्वराज्य के आंदोलन में सत्याग्रह के तत्त्व के न होने के कारण, लोकसत्ता के निर्माण में लोकशक्ति का प्रकटन एक कमजोर पक्ष रहा। भूमि के दोहन तथा ग्रामीण श्रम के शोषण का चक्र, बिना तीव्र सत्याग्रह के तोड़ना सम्भव नहीं था। गांधी ने जिस अमोघ अस्त्र का अविष्कार किया था, उसका इस्तेमाल नहीं हो सका। सत्याग्रह न केवल हिंसा, दमन व अन्याय आधारित शक्तियों का निषेध करता, बल्कि नयी सत्ता का आधार भी प्रकट करता। गांधीजी ने सत्याग्रह के जो प्रयोग किये, वे इस प्रकार थे—राजसत्ता की अनीति के खिलाफ सविनय अवज्ञा एवं असहयोग, पूंजीवादी शोषण के खिलाफ उनके उत्पादों का बहिष्कार एवं स्वदेशी पर जोर तथा सामाजिक हिंसा के विरुद्ध व कुरीतियों के विरुद्ध पिकेटिंग, धरना, उपवास आदि। सत्याग्रह उन व्यक्तियों व समूहों में भी परिवर्तन लाता, जो सत्याग्रह करते।

तीसरा कमजोर पक्ष वैकल्पिक रचना खड़ी करने का था। वैकल्पिक रचनात्मक कार्यक्रम का अर्थ यह है कि यदि रचनात्मक कार्यक्रम शोषणकारी व्यवस्था या पूंजीवादी व्यवस्था के सहअस्तित्व में चलें तो वह वैकल्पिक रचना नहीं होगी। वैकल्पिक रचनात्मक कार्यक्रम वैकल्पिक समाज रचना के कार्यक्रम होने चाहिए थे। इसका एक पक्ष यह है कि रचनात्मक कार्यक्रम के अंतर्गत श्रम का काम करने वालों को योजना बनाने के अधिकार एवं निर्णय लेने के अधिकार से सुसज्जित करने की दिशा में बढ़ना चाहिए था। अर्थात् यहां प्रबंधक व श्रमिक कार्यकर्ता के भिन्न वर्गों को खत्म करना चाहिए था। ऐसा वैकल्पिक रचना का कार्यक्रम न तो राज्य आश्रित होना चाहिए था, न ही वह पूंजीवादी बाजार के खेल का हिस्सा हो सकता है। इनका संगठन भी ऐसा नहीं हो सकता कि उसमें श्रेणीबद्धता हो, एवं ऐसा न हो कि ऊपर की श्रेणियों में अधिक अधिकार हों तथा जैसे-जैसे नीचे की श्रेणियों में जायें, अधिकार कम से कमतर होते जायें। इसके उलट वैकल्पिक रचनात्मक कार्य की संरचना ऐसी हो, जिसमें अधिकार और निर्णय लेने की क्षमता लोक स्तर पर, श्रमिक कामगार स्तर पर सर्वाधिक हो। वैकल्पिक रचनात्मक कार्यक्रम को आर्थिक क्रिया की इकाई मात्र बनने के बजाय, समाज परिवर्तन के वाहक के रूप में स्वयं को प्रस्तुत करना चाहिए था। साथ ही वैकल्पिक समाज में नये नैतिक मनुष्य के जो मूल्य होंगे एवं जो जीवन दृष्टि होगी, उसका प्रतिबिम्ब वैकल्पिक रचना के संगठन में भी दिखना चाहिए।

सरकारी, वामपंथी तथा समाजवादी आंदोलन और भूदान-ग्रामदान आंदोलन की भूमिकाएं महत्त्वपूर्ण थीं, किन्तु अपनी अंतर्निहित कमियों के कारण एक समय के बाद इनका प्रभाव क्षीण होता चला गया।

–बिमल कुमार

धन और धरती बंट के रहेगी, भेद की खाई पट के रहेगी

❑ महादेव विद्रोही

जिस देश में सुई के नोंक के बराबर जमीन के लिए महाभारत हुआ, उसी देश में एक संत की अपील पर लाखों एकड़ जमीन दान में मिली। चारों और भूदान की बयार चलने लगी। 'धन और धरती बंट के रहेगी, भेद की खाई पट के रहेगी ' का नारा गूंज उठा। भूदान के बाद जीवन दान शुरू हुआ। 1954 के बोधगया के सर्वोदय सम्मेलन में जेपी ने पहला जीवन दान दिया। जेपी को अपना जीवन दान देते हुए विनोबा ने लिखा-'श्री जयप्रकाश, कल आपने जो आवाहन किया था, उसके जवाब में, भूदानयज्ञमूलक, ग्रामोद्योग प्रधान, अहिंसक क्रांति के लिए मेरा जीवन समर्पण।''

1952 के अप्रैल में सेवापुरी (उत्तर प्रदेश) में हुए सर्व सेवा संघ अधिवेशन ने भूदान की जिम्मेवारी अपने ऊपर लेते हुए 5 लाख गावों में दो वर्षों में 25 लाख एकड़ भूदान प्राप्ति का संकल्प लिया। सर्वोदय का कारवां बढ़ चला। यह आंदोलन सिर्फ़ जमीन के लिए नहीं था। 7 -9 मार्च 1953 को चांडिल (बिहार) में हुए सर्वोदय सम्मलेन में आचार्य विनोबा ने 'हिंसा शक्ति की विरोधी और दण्डशक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति' यानि लोकशक्ति खड़ी करने का आह्वान किया। इसमें नई समाज रचना का दर्शन है। आज जब भूदान आंदोलन के 69 वर्ष पूरे हो रहे हैं, तो इसके सिंहावलोकन और भावी क़दमों पर नए सिरे से गम्भीर चिंतन की आवश्यकता है।

* उस समय देश के 18 राज्यों में भूदान अधिनियम बने। पहला भूदान अधिनियम 1952 में उत्तर प्रदेश में बना। आज कर्नाटक, हरियाणा, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल सहित कई राज्यों ने भूदान अधिनियम समाप्त कर दिये हैं। प. बंगाल ने भूदान में मिली सभी जमीनों को राजस्व विभाग के अंतर्गत लेकर उसे भूमिहीनों में बांट दिया है। शेष राज्यों की भूदान भूमि का क्या हुआ, पता नहीं।

* भूदान की जमीन बेची नहीं जा सकती है। राजस्थान सरकार ने इस प्रावधान को समाप्त करके भूदान का गला ही घोंट दिया है

* कई राज्यों में वर्षों तक भूदान बोर्ड/समिति का गठन ही नहीं हुआ। जहां गठन हुआ है, वहां संसाधनों के आभाव में कुछ हो नहीं पाता है।

* कुछ लोगों के व्यक्तिगत स्वार्थों के चलते भूदान भ्रष्टाचार का पर्याय बन गया है। संचार माध्यमों की रिपोर्टों के अनुसार अकेले तेलंगाना में करीब साढ़े तीन हजार करोड़ का भ्रष्टाचार हुआ है। भूदान की जमीनों के सौदे हो रहे हैं, जमीनें भूमिहीनों के बदले कंपनियों को दी जा रही हैं। भूमिहीनों के लिए जमीन की मांग करने वाले कार्यकर्ताओं को अनेक झूठे मुकदमों में फसाया गया है, तथा उन पर जानलेवा हमले हुए हैं।

* महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में जिन्हें भूदान की जमीन दी जाती है, उन भूमिहीनों से शुल्क के नाम पर हजारों रूपये लिए जाते हैं, पर उन्हें रसीद दान की दी जाती है।

* भूदान की जमीन खेतिहर भूमिहीनों के लिए है, पर संस्थाओं को भी बड़ी मात्रा में जमीनें आवंटित की गयी हैं।

* जो भूदान समितियां भूमिहीनों के हितों की रक्षा के लिए बनाई गयी थीं, वे भूमिहीनों के खिलाफ कार्य कर रही हैं।

* भूदान अधिनियम दशकों पहले बने हैं। आज उनमें अनेक संशोधनों की आवश्यकता है। सर्वोदय कार्यकर्ताओं, राज्य सरकारों तथा केंद्र सरकार को इस दिशा में संयुक्त पहल करने की जरूरत है।

* कई राज्यों में भूदान की बड़ी मात्रा में ऐसी जमीनें हैं, जो वितरण के अयोग्य घोषित कर दी गयी हैं. तकनीक के विकास के कारण आज कोई भी जमीन ऐसी नहीं है जिसका कोई उपयोग न हो। मेरे एक मित्र ने कहा , यदि मुझे पहाड़ और रेत वाली जमीन मिलती है, तो भी मुझे ख़ुशी होगी। रेत और पत्थर बेचकर करोड़पति बन सकता हूं। यदि आदाता को तथाकथित 'अयोग्य' जमीन लेने में आपत्ति नहीं है, तो भूदान समितियों/बोर्डों को ऐसी जमीनों के वितरण में परेशानी क्यों होनी चाहिए?

* भूदान के पैसों का उपयोग भूमिहीनों के लिए होना चाहिए, पर इसके विपरीत एक राज्य में लाखों रूपये संस्थाओं एवं व्यक्तियों को उपकृत करने के लिए बांटे जा रहे हैं। यह एक ऐसा दाग है, जो कभी छूटेगा नहीं। पता नहीं आने वाली पीढ़ियां हमारे बारे में क्या सोचेंगी।

* भूदान की जमीन भूमिहीन गरीबों के लिए है, इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का फैसला भी है कि भूदान की जमीन गांव में रहने वाले भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को ही दी जाएगी। बावजूद इसके समय-समय पर अनेक राज्यों में इसका उल्लंघन होता आया है। कुछ वर्ष पहले बिहार के गोपालगंज जिले में एक भूमिहीन सैनिक झूलनलाल बैठा का एक केस सामने आया है, जहां झूलनलाल बैठा के नाम आवंटित जमीन बाद में भूमिवानों को आवंटित कर दी गयी। यह मामला अंततः पटना उच्च न्यायालय में पहुंचा और न्यायालय ने इस पर सख्त नाराजगी व्यक्त करते हुए भूदान के सभी मामलों की आरंभ से अब तक की जांच करने का आदेश दे दिया है। जांच करने के लिए एक जांच आयोग बनाया गया है। न्यायालय ने कहा है कि समय-समय पर इसकी प्रगति रिपोर्ट से न्यायालय को अवगत कराया जाए। यह एक दुखद प्रसंग है, जब भूमिहीनों को दी जाने वाली जमीन किसी भूमिवान को दे दी जाती है। यह बंद होना चाहिए।

* भागलपुर जिले के पीरपैंती प्रखंड के थुलदुलिया गांव में सरकार ने भूदान की कुछ जमीन अधिग्रहीत की। रिकॉर्ड के अनुसार यह जमीन कुछ भूमिहीनों को दी गयी थी। यह जमीन जिसके कब्जे में थी और जिसकी जमाबंदी थी, उसे अधिग्रहण की राशि दे दी गयी। जब बिहार भूदान यज्ञ समिति को इसका पता चला तो उसने इस पैसे के लिए दावा किया और भूदान किसान के विरुद्ध न्यायालय में चली गयी। उनका कहना था यह राशि भूदान किसान को नहीं, भूदान यज्ञ समिति को मिलनी चाहिए। यह एक अजीब किस्सा है। भूदान समिति का काम भूदान किसानों को मदद करने का है लेकिन इसके विपरीत समिति ने भूदान किसान के खिलाफ जाकर भूदान समिति को पैसे मिलें, इसके लिए सारे काम किए, यह कदम सर्वथा अनुचित है। फिलहाल बिहार भूदान यज्ञ समिति को भंग कर दिया गया है तथा इसका प्रभार राजस्व सचिव को दे दिया गया है। ❑

अध्यक्ष की कलम से

❑ महादेव विद्रोही

21 मार्च को सेवाग्राम में था। उसी दिन शाम को अहमदाबाद के लिए निकला। घोषणा हो गयी थी कि 21 तारीख की रात में 12 बजे सभी गाड़ियां रोक दी जायेंगी। संशय था कि पता नहीं गाड़ी कहां रोक दी जाय और 24 घंटे गाड़ी में ही पड़े रहना पड़े। पर गाड़ी 22 मार्च की सुबह अहमदाबाद पहुंची, क्योंकि यह 20 मार्च को पुरी से निकल चुकी थी।

अहमदाबाद पहुंचा तो उस दिन कर्फ्यू (जिसे जनता कर्फ्यू का नाम दिया गया) था। पुलिस रेलवे स्टेशन के बाहर से सभी लोगों तथा रिक्शा वालों को भगा रही थी। लोग परेशान थे। मेरे डब्बे में आंध्र प्रदेश से राजस्थान के 8-10 लोग आ रहे थे। उनके साथ छोटे बच्चे एवं महिलाएं भी थीं। 22 को जनता कर्फ्यू और 23 से लॉकडाउन के कारण यातायात के सभी साधन बंद थे। लोग कैसे अपने गंतव्य तक पहुंचेंगे, यह देखने वाला कोई नहीं था।

स्टेशन से किसी तरह घर पहुंचा। मेरा घर अहमदाबाद के मुख्य मार्ग पर है। 23 मार्च से सिर पर सामान उठाये लोग अपने गांवों को पैदल ही चल पड़े। पूरे दिन-रात लोगों का तांता लगा रहा। यहां लाखों की संख्या में राजस्थान के लोग हैं, जो अलग-अलग तरह के कामों में हैं। एक तो कोरोना का डर और दूसरे फैक्टरियों के बंद हो जाने के कारण उन्हें शहर छोड़ने के अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं सूझा। पता नहीं सैकड़ों मील की यात्रा इन लोगों ने कैसे पूरी की होगी। रास्ते के सारे होटल बंद थे। उन्हें कुछ भोजन भी नसीब हुआ होगा या नहीं, यह कहना मुश्किल है। तालाबंदी की घोषणा के क्रियान्वयन से पहले यदि लोगों को 2-3 दिनों का समय मिल जाता तो वे सुरक्षित जगहों पर पहुंच जाते और इतनी अफरा-तफरी नहीं मचती।

तालाबांदी के कारण अपने घरों को लौट रहे श्रमिकों को विविध परेशानियों का सामना तो करना ही पड़ा है, साथ ही कई राज्यों में उन्हें पुलिस के जुल्म भी सहन करने पड़े हैं। उत्तर प्रदेश के बरेली में तो लोगों पर दवा ही छिड़क दी गयी। मालूम नहीं उनकी आंखों, त्वचा आदि पर उसका क्या असर हुआ होगा!

विभिन्न स्थानों पर डॉक्टर तथा दूसरे स्वास्थ्यकर्मी चौबीसों घंटे पीड़ितों की सेवा में लगे हैं। अपने कर्तव्य का पालन करते हुए इनमें से कइयों की मृत्यु भी हो गयी है। हम उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं तथा दुःख की इस घड़ी में उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना प्रेषित करते हैं।

अलग-अलग राज्यों में प्रतिकूलताओं के बावजूद स्वास्थ्यकर्मी अपना फर्ज निभा रहे हैं, पर उनके पास अपनी सुरक्षा के लिए पर्याप्त साधन नहीं हैं, अतः उनको संक्रमण हो रहा है। समाचार माध्यमों की रिपोर्ट के अनुसार विशाखापट्टनम के एक डॉक्टर को 15 दिनों तक एक ही मास्क का उपयोग करने के लिए कहा गया। जब उन्होंने इसके विरुद्ध आवाज उठायी तो उन्हें निलंबित कर दिया गया। यह फासीवादी कदम है। ऐसे में कोई कैसे रोगियों की सेवा करने का साहस जुटायेगा? इसी तरह पंजाब में निहंगों द्वारा एक पुलिस निरीक्षक का हाथ काटा जाना बर्बर और आपराधिक कृत्य है। हम इसकी निन्दा करते हैं तथा सभी नागरिकों से अपील करते हैं कि ड्यूटी पर कार्यरत लोगों के साथ सहयोग करें। साथ ही हिंसा की घटनाओं से दूर रहें।

मेरा जीवन विकास

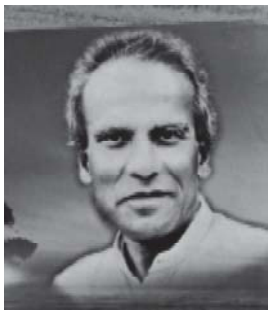

इन दिनों कई पुराने दस्तावेजों के अध्ययन तथा पुस्तकों का पठन कर रहा हूं। उसमें से एक है—'रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा अंत्योदय' एवं 'मेरा जीवन विकास'। इसे अण्णा साहब सहस्त्रबुद्धे ने लिखा है। सभी कार्यकर्ताओं के लिए यह एक पठनीय पुस्तक है। इसमें उनके जीवन विकास के साथ सर्वोदय आंदोलन की महत्त्वपूर्ण बातें हैं। एक जगह उन्होंने पंडित नेहरू के साथ हुई अपनी बातचीत का उल्लेख किया है। मैं उसे आपके बीच भी रखना चाहता हूं—

सर्व सेवा संघ की स्थापना सम्मेलन के समय नेहरू जी सेवाग्राम आये थे। अनेक लोगों का कहना था कि अब गांधीजी नहीं हैं तो मार्गदर्शन और नेतृत्व नेहरू जी करें। इस बारे में सर्वानुमति से उनसे बात करने के लिए मैं गया था। पंडित जी ने मुझसे साफ कहा कि ''मैं आप लोगों का मार्गदर्शन नहीं कर पाऊंगा। आप इसकी अपेक्षा न रखें। आप लोगों की और मेरी सोचने की पद्धति अलग-अलग है। सरदार से भी मार्गदर्शन मत मांगिये। हम राजनैतिक लोग हैं। रचनात्मक कामों का महत्त्व मैं भी मानता हूं। लेकिन हमारा ढांचा वह नहीं है।'' आगे बोले, ''हम लोगों की या भारत सरकार की मदद की अपेक्षा पर भी आप लोग अवलंबित न रहें। आप अपना क्षेत्र और अपनी शक्ति स्वतंत्र रूप से खड़ी करें। जब जितनी सहायता संभव होगी, वह हम करेंगे। लेकिन व्यर्थ में हमसे बहुत आशा न रखिये।'' वे फिर बोले, ''सेक्यूलरिज्म एक ऐसा विषय है, जिसके लिए कांग्रेस सदस्य ही क्या, चालीस करोड़ लोगों के खिलाफ भी मैं अकेला खड़ा रहूंगा, लड़ूंगा। बाकी सारे सवालों पर औरों की राय को अपने पक्ष में करने का मैं प्रयत्न करूंगा। अगर मैं वैसा नहीं कर सका तो सर्वानुमति से जो तय होगा, उसे स्वीकार करूंगा।''

उनका कहना था कि ''शासन को जनता का डर लगना चाहिए। जनता के निश्चय के आगे झुकने का शासन को अभ्यास होना चाहिए। लोकतंत्र में यह बहुत महत्त्व की बात है। परंपरावादी जनता जब जिद पर आती है, तब सवाल सचमुच उलझ जाते हैं। सामान्य मनुष्य को नजदीक का समझ में नहीं आता और दूर का दीखता नहीं। विद्वानों से राय लेने जाते हैं तो उनके अपने हित-संबंध होते हैं। कई तो जान-बूझकर निभाये जाते हैं। कुछ लोग अनजाने उन हित-संबंधों को अबाधित रखते हैं। जनता सार्वभौम होती है, मालिक होती है। लेकिन इस सुस्त मालिक को

जगाने में नौकरशाही को और सचमुच नौकर ही रहने वाले लोकनेताओं को कोई दिलचस्पी नहीं होती। समस्याएं बहुत जटिल बन जाती हैं।''

अण्णा साहब का जन्म 7 अक्टूबर 1897 को पुणे में हुआ। आजादी के आंदोलन के दौरान उन्हें कई बार जेल यात्राएं करनी पड़ी, महाराष्ट्र में उन्होंने खादी का बड़ा काम किया, सरकार की ओर से उन्हें ग्रामीण उद्योगों के अध्ययन के लिए जापान भेजा गया। सर्व सेवा संघ के मंत्री, खादी ग्रामोद्योग आयोग के सदस्य, योजना आयोग के सदस्य तथा इसके रूरल इंडस्ट्रीज कमेटी के अध्यक्ष, सेवाग्राम आश्रम के अध्यक्ष सहित विभिन्न जिम्मेवारियों का उन्होंने सफलतापूर्वक निर्वहन किया। ओडिशा के कोरापुट के ग्रामदानी गांवों के पुनर्निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए उन्हें पद्मविभूषण से भी विभूषित किया गया। 11 मार्च 1980 को बम्बई में उनका निधन हो गया।

इधर कार्यकर्ताओं में अध्ययन कम हुआ है। यह ठीक नहीं है। अब कहीं तीन दिनों का भी शिविर होता है, तो कार्यकर्ताओं को बहुत अधिक लगता है। पहले हम नारायण भाई द्वारा आयोजित शिविरों में जाते थे, जहां एक-एक महीने के शिविर होते थे। पहला वर्ग तो सूर्योदय के पहले हो जाता था। वह प्रशिक्षण आज भी काम दे रहा है।

सर्वोदय जगत

संपूर्ण लॉकडाउन के कारण 'सर्वोदय जगत' के लगातार दो अंकों का छपना संभव नहीं हुआ, पर प्रतिकूलताओं के बीच हमारी टीम ने इसका वेब संस्करण तैयार किया। यह पहला अवसर था, जब अंक छपा नहीं और वेब संस्करण ही लोगों को उपलब्ध कराया गया। हम इसके लिए 'सर्वोदय जगत' के संपादक, सह-संपादक तथा सभी कार्यकर्ताओं को बधाई और साधुवाद देते हैं। यह अंक भी वेब संस्करण के रूप में ही आपके सामने है। इसका अनुभव कैसा रहा, अपनी प्रतिक्रियाओं से अवगत करायें।

पिछले एक वर्ष से 'सर्वोदय जगत' नये कलेवर में आपके बीच पहुंच रहा है। इसके अधिकांश लेख, समाचार आदि समसामयिक विषयों पर केन्द्रित होते हैं, साथ ही निर्धारित समय पर डाक से भेजे भी जाते हैं। आप बीच-बीच में अपने सुझाव एवं प्रतिक्रियाएं भेजते रहेंगे, तो संपादकों का हौसला बढ़ेगा।

मैं 'अध्यक्ष की कलम से' स्तम्भ द्वारा सर्व सेवा संघ की विभिन्न गतिविधियों से आपको अवगत कराते रहने का प्रयत्न करता रहता हूं। यह भी सोचता रहता हूं कि इसे कौन पढ़ता होगा। लेकिन मुझे इस बात की खुशी है कि इसे बड़े पैमाने पर पढ़ा जाता है। पत्र, ईमेल और फोन द्वारा लोग अपनी प्रतिक्रियाएं बताते रहते हैं। अभी मेरठ से कृष्णकुमार जी ने पत्र लिखकर विविध विषयों पर अपनी राय भेजी है।

केरल सरकार का प्रशंसनीय कदम

केरल सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष जोस मैथ्यू से बात हुई तो उन्होंने बताया कि केरल सरकार ने सभी ग्राम पंचायतों में सामुदायिक भोजनालय की व्यवस्था की है, जो सभी लोगों के लिए है। जो लोग वृद्ध हैं या किसी कारण भोजनालय में नहीं आ पा रहे हैं, उन सब लोगों के घरों तक भोजन पहुंचाने की व्यवस्था की गई है इसके कारण कहीं कोई भागदौड़ नहीं है और सभी लोग आश्वस्त हैं कि उन्हें उनकी आवश्यकता के अनुसार भोजन जरूर मिलेगा। केरल सरकार का यह कदम अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है। अन्य राज्यों को भी इससे सीखने और इस दिशा में कदम बढ़ाने की आवश्यकता है। अन्य राज्यों में जो लोग बीपीएल की सूची में नहीं है उनके लिए कोई व्यवस्था नहीं है, जबकि केरल की सामुदायिक रसोई सबके लिए खुली है।

केरल सरकार ने सभी सरकारी विभागों, स्थानीय समितियों और रेवन्यू तथा आपूर्ति विभागों की मदद से कोरोना महामारी पर लगभग नियंत्रण बना लिया है। सिविल सप्लाई विभाग बीपीएल परिवारों को 35 किलोग्राम तथा एपीएल परिवारों को 15 किलोग्राम चावल दे रहा है। पुलिस और स्थानीय प्रशासन की निगरानी में सभी मरीजों को जरूरी दवाइयां और भोजन उनके घर पर उपलब्ध कराया जा रहा है। केरल सरकार के इन प्रयासों की प्रशंसा सात ब्रिटिश नागरिकों के एक जांच दल ने भी की है। ❑

सूचना

जैसा कि आपको विदित है, सर्व सेवा संघ का अधिवेशन 30-31 मार्च 2020 को कोट्टयम (केरल) में होना निर्धारित था। कोरोना वायरस से उत्पन्न स्थिति के कारण पूरी दुनिया एक गंभीर संकट से गुजर रही है। इसके मद्देनजर भारत में भी प्रधानमंत्री ने पूरे देश में 21 दिनों का लॉकडाउन घोषित किया। ऐसी परिस्थिति में अधिवेशन स्थगित करना पड़ा है। 14 अप्रैल 2020 को प्रधानमंत्री ने लॉकडाउन की अवधि बढ़ाकर 3 मई तक कर दी है।

जैसे ही स्थिति सामान्य होगी, अधिवेशन की नयी तारीख एवं स्थान निर्धारित कर इसकी सूचना शीघ्रातिशीघ्र आपको दी जायेगी।

तब तक सर्व सेवा संघ की नियमावली की धारा 14 के अनुसार वर्तमान समिति अपना कार्य करती रहेगी।

–महादेव विद्रोही, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

चिन्तन

ग्रामस्वराज्य धरती पर क्यों नहीं उतरा!

❑ सर्वनारायण दास

पर हो अधीर मत मानवते!
मत हो अधीर तू मेरे मन!
है जूझ रही इस व्यूह बीच
धरती की कोमल एक किरण।
अब प्रश्न नहीं यह एक किरण
किस तरह द्वंद्व से छूटेगी?
है प्रश्न व्यूह पर इसी तरह
बाकी किरणें कब टूटेंगी?
—दिनकर

ततः किम्

एक प्रश्न जो सभी विचारशील व्यक्तियों के हृदय में उठता है और जो उन सेवकों के दिलों को भी कुरेदता रहता है, जिन्होंने अहिंसक क्रांति के लिए अपना जीवन समर्पण किया, इसका श्रेष्ठतम भाग उसमें होम कर डाला कि इतना सारा होकर भी आखिर क्या परिणाम आया? लाखों एकड़ जमीन भूदान में मिली। बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु आदि अनेक प्रदेश ग्रामदान में आये, लेकिन ग्रामस्वराज्य भारत की धरती पर कितना उतर पाया? करुणा का राज्य स्थापित होने के बजाय संपूर्ण देश में हिंसा और नृशंसता का दावानल ही फैलता जा रहा है। ऐसी हालत में सामान्य जनमानस में यही धारणा पैठ गयी है कि भूदान व ग्रामदान आंदोलन बिल्कुल विफल रहे और सर्वोदय, अहिंसा आदि बातें सिर्फ कल्पनालोक की हैं, इस व्यावहारिक जगत् में चलने वाली नहीं। इस निराशा और अश्रद्धा की घड़ी में, आइये, देखते हैं कि हकीकत दरअसल क्या है?

भूदान यज्ञ पूर्ण सफल रहा

गंभीरता और तटस्थता से विचार किया जाय, तो कहना होगा कि भूदान यज्ञ पूरा सफल और यशस्वी रहा, बावजूद इसके कि लक्ष्य-प्राप्ति होना अभी बाकी है। सफलता और लक्ष्य प्राप्ति के बीच कुछ सूक्ष्म अंतर हैं। किसी क्रांतिकारी विचार और कार्यक्रम की सफलता की पहचान इन बातों से होती है-

(1) क्या हमें नवीन और उदात्त ध्येय प्राप्त हुआ? (2) क्या उस ध्येय-प्राप्ति के लिए मार्ग भी मिला? (3) क्या वह मार्ग सुगम और प्रशांत बना? (4) क्या ध्येय कुछ करीब आया?

ध्येय का कुछ करीब आना या ध्येय के कुछ करीब पहुंचने का अर्थ यह कि मात्र यूटोपिया न रहकर ध्येय के प्रति एक अभीप्सा की निर्मिति लोकचेतना में हुई है। भूदान-ग्रामदान के संबंध में इन चारों प्रश्नों का उत्तर 'हां' में मिलता है। लक्ष्य प्राप्ति लोकचेतना में निर्मित अभीप्सा की सहज क्रमिक परिणति होती है, जिसका मोमेन्टम, गतिशक्ति की अभीप्सा और बाह्य परिस्थिति, इन दोनों बातों पर सम्मिलित रूप से निर्भर है। और बाह्य परिस्थिति चाहे जितनी अंधकारपूर्ण और प्रतिकूल दीखती हो, वस्तुतः अत्यंत वेग से अनुकूलता का निर्माण कर रही है। युग की मांग और युगांतरकारी विचार की यह स्वाभाविक प्रक्रिया है।

क्रांति, जिसे दहलीज से लौट जाना पड़ा

केवल लक्ष्य प्राप्ति की दृष्टि से विचार करें, तो भी भूदान यज्ञ सर्वथा सफल रहा। इसकी अभूतपूर्व ऐतिहासिक सफलता, विचारक्रांति के अतिरिक्त धरातल की सफलता इस बात में है कि उसने अहिंसक क्रांति को राष्ट्र की दहलीज तक ला पहुंचाया और वह भी संघर्ष या टकराव की राह गये बगैर। यह अलग बात है कि इस क्रांति के स्वागत की तैयारी न तो राष्ट्र नेताओं की थी, न प्रबुद्ध माने जाने वाले वर्ग की और न कुल मिलाकर देश की जनता की ही। सेवक समुदाय भी इस वास्ते वस्तुतः तैयार नहीं था। तब आज जो दृश्य प्रस्तुत हैं, वे उस क्रांति देवी के दहलीज पर से वापस लौट जाने के ही परिणाम हैं। 'एक साल में स्वराज्य' का आह्वान करने वाले बापू को चौरीचौरा कांड के परिणामस्वरूप 1922 में जब अपना सत्याग्रह-कार्यक्रम वापस लेना पड़ा, तो बम्बई प्रेसिडेंसी के तत्कालीन गवर्नर सर जी. ए. लॉयड ने कहा था : - India has missed independence by an inch. आजादी लेने में भारत को सिर्फ एक इंच की कसर रह गयी थी। उस एक इंच की कसर दूर करने में कितना समय लगा है, कैसी कीमतें चुकानी पड़ी हैं, यह छिपा नहीं है। स्वराज्य आज तक सपना ही बना हुआ है। भूदान आंदोलन के साथ भी उसी इतिहास की पुनरावृत्ति हुई है। इतिहास किसी राष्ट्र को कभी-कभी अकल्पनीय महान् अवसर देता है, लेकिन इसे गंवा देने पर सजा भी उतनी ही कठोर मिलती है।

जीत कैसी और किसकी?

भूदान आंदोलन के विफल होने की बात मंजूर कर भी लें, तो आज के राष्ट्रीय और जागतिक संदर्भ में दो सवाल एक साथ उठ खड़े होते हैं -

(1) विफलता यानी हार आखिर किसकी हुई? (2) सफलता यानी विजयश्री किसने हासिल की?

अगर सफलता की पहचान मानव-समाज को, सारी दुनिया को अभूतपूर्व संकट में डाल देना, नित-नये और एक पर एक गहरे संकट का निर्माण करना ही हो, तो दुनिया-भर में खड़ा मौजूदा शासनतंत्र और अर्थतंत्र पूर्णरूपेण सफल कहे जायेंगे। लेकिन इनका दुर्भाग्य यह है कि अपनी ही पैदा की हुई समस्याओं से ये निकल नहीं पा रहे हैं। इनके पीछे छाया की तरह निरंतर साथ रहने वाला तीसरा सवाल लगा हुआ है। इस आर्थिक-राजनैतिक ढांचे को खड़ा करने और टिकाये रखने की कीमत आखिर कितनी बड़ी है और यह किसे चुकानी पड़ रही है? प्रगति और विकास की चौंधिया देने वाली चमक के साये में आखिर कितना घना अंधेरा पल रहा है? इन प्रश्नों के आगे उनकी तमाम सफलताएं और लुभाने वाली चमक एकदम फीकी पड़ जाती है। जहां जीवन-संगठन के प्रश्न को स्थायित्व और विकास के नजरिये से सहस्राब्दियों के दायरे में देखने की जरूरत है, वहां मुश्किल से दशकों के पैमाने से माप-तौल करने वाले जीवन-दर्शन की एकमात्र नियति हो जाती है, एक भुलावे से दूसरे, तीसरे...ऐसे अनगिनत भुलावों में भटकते रहना।

आखिर कौन ठगा गया?

भूदान-आंदोलन को विफल मानने का संभवतः एक खास कारण यह है कि आज सारा ढांचा ही खुद के बोझ से चरमरा रहा है और हालात काबू से बाहर हैं। भूदान-आरोहण के उत्कर्ष काल में पढ़े-लिखे लोगों के मुंह से प्रायः उद्‌गार निकला करते थे कि विनोबा ने हिन्दुस्तान में खूनी क्रांति को सौ साल तक के लिए रोक दिया। इन पंक्तियों के लेखक ने तब कहा था कि विनोबा को नाहक ही बहुत ज्यादा श्रेय दिया जा रहा है। खूनी क्रांति को उन्होंने सचमुच रोका है, ऐसा मान भी लिया जाय, तो यह मुश्किल से पंद्रह-बीस सालों के लिए है। जिन्होंने भूदान-ग्रामदान की संपूर्ण उपयोगिता महज 'स्टेटस-को', यथावत् स्थिति को कुछ हल्के फेरबदल के साथ सुरक्षित रखने में ही मानी थी, उनकी भ्रांति तो टूटने ही वाली थी। भूदान-ग्रामदान पर इस भ्रांति को टिकाये रखने की जिम्मेवारी कहां से आयी? जिसे क्षण भर के लिए भी 'स्टेटस-को' सहन नहीं हो रहा था, जो 'ऊर्ध्वबाहुः विरोम्येषः', हाथ उठाकर जोर-जोर से आवाज देता रहा, तब भी कुंभकर्णी निद्रा में निश्चिन्त सोये रहे लोगों को खुद से पूछना चाहिए कि आखिर कौन ठगा गया?

दोहरा मानदंड

जनमानस में हिंसा के प्रति पक्षपातपूर्ण श्रद्धा और अहिंसा के लिए संशययुक्त पूर्वाग्रह—हिंसा और अहिंसा के लिए ये अलग-अलग मानदंड चलते हैं। अहिंसा में अत्यल्प त्याग करने, अत्यल्प शक्ति लगाने पर भी इच्छित परिणाम तत्काल और पूरा-पूरा मिलना चाहिए, अन्यथा अहिंसा फेल मानी जाती है। लेकिन हिंसा में ऊंची से ऊंची कीमत, बड़ी से बड़ी कुर्बानी देना भी मंजूर होता है। तब भी असफलता मिली, तो शिकायत हिंसा से न होकर, इसमें लगायी गयी ताकत और दी गयी कुर्बानियों से होती है। हमेशा फेल होते रहने पर भी हिंसा को फेल नहीं माना जाता। विनोबा के शब्दों में, ''प्रेम पर शंका कर सकते हैं। विचार पर, ज्ञान पर भी शंका कर सकते हैं। लेकिन हिंसा अचूक भगवती है।'' 'जज' करते वक्त भूदान आंदोलन के साथ भी यही दोहरा मानदंड तो काम नहीं कर रहा है? लेकिन अहिंसा के लिए खास चिन्ता की जरूरत नहीं रह जाती, क्योंकि स्वयं विज्ञान से ही अब हिंसा का पाला पड़ गया है। फांसी लगाकर खतम हो जाने के लिए विज्ञान ने हिंसा को लंबी, बहुत लंबी रस्सी दे डाली है।

विनोबा की खुद की कसौटी

विनोबाजी कहते थे, ''मैं जो भी कदम उठाता हूं, उसकी गहराई में जाकर मूल पकड़े बिना नहीं रहता। कोई भी समस्या मुझे डराती नहीं। कोई भी समस्या चाहे जितनी बड़ी हो, मेरे सामने छोटी ही बनकर आती है। मैं उससे बड़ा बन जाता हूं, आप भी उससे बड़े नजर आते हैं।'' समस्या चाहे जितनी बड़ी हो, हमें उससे भी बड़ा बना देने वाले विनोबा के भूदान-ग्रामदान आंदोलन को 'जज' करते वक्त हम जरा यह देख लें कि स्वयं इसके प्रणेता ने अपने लिए सफलता की क्या कसौटी रखी थी! कुछ लाखों या करोड़ों एकड़ जमीन का भूमिवानों के पास से भूमिहीनों में बंट जाना भर उन्हें अभीष्ट नहीं था, हालांकि यही चीज लोगों की नजर में असंभव बात थी। चमत्कार ही माना गया। जब कि मुश्किल से तब तक लाख एकड़ जमीन मिल पायी थी, उनके मुंह से मानो कालात्मा बोल उठी, 'जमीन तो मेरे पास कब की पहुंच चुकी है। आपको तय यह करना है कि घी के डब्बे में आग लगानी है या वेदमंत्रों के साथ यज्ञ में उसकी आहुति देनी है।''

उनका एकमात्र लक्ष्य अहिंसा की ताकत प्रकट करना रहा और किसी काम को उठाने, न उठाने या उठाये हुए काम को छोड़ देने के पीछे यही दृष्टि काम करती रही। सन् 1956 में, जो भूदान का शिखर उत्कर्ष-काल कहा जायेगा, भाषावार प्रांत रचना को लेकर देश में व्यापक हिंसा फूट पड़ी। तब विनोबा ने अत्यंत व्यथित हृदय से जाहिर किया—''हम कबूल करते हैं कि हमारी अत्यंत हार हुई है।'' गोआ में पुर्तगाली शासन से मुक्ति के लिए भारत सरकार द्वारा जब सैन्य कार्रवाई की गयी, तो सर्वोदय सेवकों को गहरा आघात लगा था। उनकी भावना थी कि यह कार्रवाई हमारे लिए चुनौती है। उस वक्त विनोबाजी का उत्तर और भी परेशानी में डालने वाला प्रतीत हुआ था—''सेना कोई केले-संतरे खाने के लिए नहीं रहती।' और 'सेना का होना ही हमारे लिए चुनौती है।' दरअसल इस तरह के शख्स और उनके अपने पैमाने इस व्यावहारिक दुनिया के दायरे में समा नहीं पाते। जब अलग-थलग, बिल्कुल दूर न रहकर ये हस्तियां व्यवहारवादी दुनिया के कारोबार में दखल देने लगती हैं, जिन्दगी को प्रभावित करने लगती हैं, तो इनका कुछ हिसाब लगाना लोगों की मजबूरी हो जाती है। महापुरुषों और सामान्य लोगों, दोनों की यही नियति दीखती है।

सर्वोदय का कार्य आरंभ ही नहीं हुआ

जब यह सवाल उठाया जाता है कि भूदान-ग्रामदान की इतनी बड़ी निष्पत्ति के बावजूद भारत की धरती पर ग्रामस्वराज्य क्यों नहीं उतरा, क्यों वह आज भी दूर की ही बात है? तब इससे भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण एक दूसरे सवाल की ओर शायद ही किसी का ध्यान जाता है। सवाल यह है कि ऐसी अहिंसक क्रांति के वाहक बनने वाले, अहिंसा की ताकत की खोज में अपना जीवन लगाने वाले सेवकों का विशाल समूह क्या सारे देश में खड़ा है? ऐसे सेवक गांव-गांव, नगर-नगर में निकलें, इसके लिए जरूरी निष्कामता का वातावरण देश में है क्या? निष्काम सेवा की जहां अत्यंत उपेक्षा चल रही हो और फलतः समर्पित सेवकों का व्यापक समूह खड़ा ही न हो पा रहा हो, उस देश में किसी भी प्रकार की क्रांति की आशा रखना मात्र दिवास्वप्न है। भूदान-ग्रामदान आंदोलन में सेवकों की संख्या इतनी थोड़ी, नगण्य-तुल्य होने पर भी जो सफलता हासिल हुई, उससे ई. एफ. शूमाखर जैसे अर्थशास्त्री और इजराइल के तत्कालीन प्रधानमंत्री बेन गुरियो जैसे राजनीतिज्ञ भी बड़े चकित और साथ ही चिन्तित हो गये। आश्चर्य की बात यह नहीं है कि काम पूरा क्यों नहीं हो पाया, वरन् यह है कि इतना सारा काम कैसे हो पाया?

सन् 1958 में कर्नाटक यात्रा के समय जब कि येलवाल की ऐतिहासिक ग्रामदान परिषद अभी-अभी संपन्न हुई थी, बिहार से गये कुछ कार्यकर्ताओं के साथ चर्चा में विनोबा ने

कहा—मानो वे अपने आपसे बोल रहे हों, ''जब तक पांच हजार की आबादी पर एक कार्यकर्ता खड़ा नहीं होता, मैं मानता ही नहीं कि भारत में सर्वोदय का कार्य आरंभ हुआ।'' ग्रामदान तूफान के वक्त जमशेदपुर में उड़ीसा के नवकृष्ण चौधरी से वे कह रहे थे, ''ग्रामदान इत्यादि जो कुछ है, वह मेरा एक नाटक-मात्र है। जहां सारे के सारे लोग अत्यंत पराधीन हैं, वहां लोकशक्ति जगाने का एक प्रयत्न है। मैं कहता भी हूं कि 15 अगस्त 1947 से भारत में पारतंत्र्य का आरंभ हुआ है।'' इस नाटक के वास्तविकता में रूपांतरित होने में जब देर होने लगी, तो उन्होंने खुद ही जाहिर कर दिया, ''कुछ वर्षों में आपके भूदान को लोग भूल जायेंगे। वह इतिहास की चीज हो जायेगी।'' ''उतावली मुझे नहीं, जमाने को है। अगर अगले तीन-चार वर्षों में ग्रामस्वराज्य का कोई क्षेत्र खड़ा नहीं कर सके, तो आप सबों (कार्यकर्ताओं) को प्राइवेट धंधों में लग जाना होगा।''

राजनैतिक नेतृत्व की शोकांतिका

इतिहास और जीवन-संगठन की दृष्टि से ग्रामस्वराज्य भारतीय प्रजा की बिल्कुल नैसर्गिक एवं स्वभावगत वस्तु है। ब्रिटिश हुकूमत ने इसे मिटा डालने का काम किया, तथापि वस्तु अपनी ही है। तब पुनः इसकी स्थापना में बाधा कहां से आती है? उत्तर मिलता है कि असली बाधा 'स्टेट' यानी राज्य ही है। तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन् ने एक गोष्ठी में कहा था कि भूदान यज्ञ की प्रगति में विलंब का एक कारण वे लोग ही हैं, जिनके हाथों में सरकार है। सर्वोच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश गजेन्द्र गड़कर ने विनोबाजी से कहा था—''भावना बन चुकी है। कानून बन जाता, तो सारा मामला खतम था। सरकार को जरा भी इमेजिनेशन (दृष्टि) होती, तो आपने जो वातावरण खड़ा कर दिया, उसका आधार लेकर कानून बना देती और कम्प्लीट रिवोल्यूशन हो सकता था। लेकिन सरकार ने नहीं किया और वह उससे होने का भी नहीं।'' सहज रूप से अनायास प्राप्त महान् अवसर को सोच-समझकर योजनापूर्वक गंवा डालना ही भारत के राजनैतिक नेतृत्व की शोकांतिका है। लेकिन विचार करने पर ध्यान में आता है कि यह घटना राज्यसत्ता का सहज स्वाभाविक फलित ही है। जब 1952 में पहला ग्रामदान मंगरोठ (उत्तर प्रदेश) में हुआ, तभी यह वास्तविकता सामने आ चुकी थी। शासनकर्ता वर्ग से यह तर्क दिया गया कि ग्रामदान से 'स्टेट विदिन स्टेट' यानी राज्य के भीतर दूसरा राज्य खड़ा हो जाता है। बाद में यह विरोध भले ही मुखर न हो पाया और राज्य संस्था की 'स्टेट विदिन स्टेट' को स्वीकार करने की शायद तैयारी भी हो जाती। लेकिन ग्रामस्वराज्य तो साक्षात् राज्य संस्था का विसर्जन ही है, यह तथ्य विलक्षण राजनीतिज्ञों और राज्यकर्ताओं के ध्यान में आते देर न लगी। राज्यसत्ता के विलय और विसर्जन में राज्यसत्ता का साफल्य, फुलफिलमेंट ही है, यह देख पाना उनके लिए, जो स्टेट के औजार रूप हैं, संभव नहीं होता। तब यह विनोबा की ही कुशलता थी कि उन्होंने ग्रामदान का स्टेट पावर से टकराव नहीं होने दिया और स्टेट पावर का उसके ही लिक्विडेशन, विसर्जन-कार्यक्रम में ज्यादा से ज्यादा उपयोग भी किया।

कल्याणकारी राज्यवाद का भुलावा

ग्रामस्वराज्य के लिए सहज भाव से भारतीय प्रजा के अभिमुख न होने का कारण बना है, उसका एक भारी भुलावे में जा फंसना। ऐसा भुलावा, मायाजाल खड़ा करने में दूसरे लोग शायद ही इस कदर कामयाब हो पाते। लेकिन जब स्वराज्य की संस्था ही सत्ता की संस्था में बदल गयी और कल्याणकारी राज्य की स्थापना लक्ष्य हो गया, तो जनता भला क्या सोचती? चाहे वेलफेयर स्टेट हो या अधिनायकवादी राज्य हो, इसके पीछे एक जीवन-दर्शन है, जो बड़ा मोहक है—'ग्रेटेस्ट गुड ऑफ द ग्रेटेस्ट नंबर', अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण। शब्दार्थ और गणित, दोनों से इसका अर्थ सर्वोदय ही निकलता है। लेकिन परस्पर हितविरोध की कल्पना पर आधारित इस जीवन-दर्शन में से निकले राज्यवाद ने सारी पृथ्वी पर कहर ढा दिया है। सरकार ही सब मर्जों की दवा है, यह भ्रम भारत में भी खड़ा किया गया, जबकि सरकार ही दरअसल सबसे बड़ा मर्ज है। स्टेट की बढ़ती हुई ताकत बापू को सबसे भयावह वस्तु दीख रही थी, लेकिन राज्य का कारोबार संभालने वाले उनके साथियों ने इसे ही अपना लक्ष्य और आदर्श माना। परिणाम यह आया कि भारतीय प्रजा में दीर्घकालीन पारतंत्र्य के कारण जहां पहले से ही जड़ता और अकर्मण्यता घर कर बैठी थी, वह और भी पुख्ता व मजबूत हो गयी। दैववाद-जनित पुरुषार्थहीनता को कल्याणकारी राज्यवाद की विचार-सरणि ने अनेकानेक गुना फैला दिया। दैववाद, कर्मवाद में कम से कम इस जन्म में सत्कार्य करने की, नैतिक आचरण की जिम्मेवारी मनुष्य पर आती है। लेकिन यहां वोट डालने और टैक्स चुका देने भर से समस्त कर्तव्यों की इतिश्री हो जाती है। नैतिक-अनैतिक सत्कर्म-असत्कर्म आदि का कोई द्वंद्व ही नहीं बचता। स्टेट पावर का डायनामिक्स, गतिशास्त्र समस्त शुभ-अशुभ, नैतिक-अनैतिक, हितकारी-अहितकारी का नियंता बन बैठा है। बदले में नागरिक को सांस लेने की हवा से लेकर मरने के बाद स्वर्ग में प्राप्तव्य सारे सुखोपभोगों तक सारी वस्तुएं सदेह यहीं उपलब्ध कराने का जिम्मा राज्यसत्ता ने उठाया है और इसकी पूर्ति में केन्द्रित अर्थतंत्र का उपहार—उपभोक्तावाद हाजिर है। इस प्रकार केन्द्रित राज्यतंत्र और केन्द्रित अर्थतंत्र का सम्मिलित ठेका चल रहा है और लोकजीवन सर्वथा असहाय और पराधीन है।

मानो इतना ही काफी नहीं था। जनता की ओर से आगे के लिए कुछ खतरा दीख रहा था, तो डेमोक्रेसी के नाम पर एक भारी इंद्रजाल खड़ा किया गया और वोट की माया फैलाकर जनता को सदा भ्रमित रखने का, उसे टुकड़ों-टुकड़ों में तोड़ने का और पूरे लोकजीवन में पारस्परिक मत्सर और वैर का पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने वाला शाश्वत धंधा चलाया गया। यह सारा जानबूझकर किया गया है, यह निर्णय देना अत्याचार-तुल्य होगा। लेकिन एक बार कल्याणकारी राज्यवाद और केन्द्रित अर्थतंत्र को स्वीकार कर लिया, तो फिर इनके तर्कसंगत अपने रास्ते और अपने तरीके होते हैं। और नतीजा सामने है।

इसका उपचार एक ही है और वह है ग्रामस्वराज्य की स्थापना को प्रस्तुत होना।

('विनोबा का विहार पर्व' से) ❑

स्मृति एवं पुराण में भूमिदान महिमा

भारतीय इतिहास में 18 अप्रैल 1951 को एक ऐसी घटना घटी, जिसकी चर्चा अनेक वर्षों तक देश में ही नहीं, अपितु विदेशों में भी होती रही। आंध्र प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र में स्थित पोचमपल्ली ग्राम के निवासी रामचन्द्र रेड्डी ने अपने अधिकार एवं स्वामित्व की एक सौ एकड़ कृषि भूमि सर्वहारा वर्ग के जीवन यापन हेतु स्वेच्छा से दान कर दी। इस घटना से प्रभावित होकर आचार्य विनोबा भावे ने 'भूदान यज्ञ' का देशव्यापी शुभारम्भ किया। इसकी सफलता हेतु विनोबा जी ने लगभग पूरे देश की पदयात्रा कर 'भूमिदान यज्ञ' का अलख जगाने का संकल्प लिया। पूरे देश में भूदान यज्ञ आरम्भ हो गया।

भूमि दान का धार्मिक महत्त्व प्रतिपादित करते हुए 'वृहस्पति स्मृति' में उल्लेख है कि -

सुवर्ण रजतं वस्त्रं मणिरत्नं च वासव।
सर्वमेव भवेदृतं वसुधां यः प्रयच्छति॥

(वृहस्पति स्मृति 5)

अर्थात- जब कोई भूमिदान देता है तो यह मानना चाहिए कि उसके द्वारा स्वर्ण, रजत, वस्त्र, मणि और रत्न आदि सब कुछ का दान दे दिया गया है।

फालकृष्टां महीं दत्त्वा
सबीजां शस्यशालिनीम्
यावत सूर्यकरा लोकास्तावत् स्वर्ग महीयते॥

(वृहस्पति स्मृति 7)

अर्थात- जो मनुष्य जोती-बोयी और उपजी हुई खेती से परिपूर्ण भूमि का दान करता है, वह जब तक लोगों में सूर्य का प्रकाश रहेगा, तब तक स्वर्ग लोक में प्रतिष्ठित रहेगा।

अपि गोचर्ममात्रेण भूमि दानेन शुयति।

(वृहस्पति स्मृति 7)

अर्थात- अपनी आजीविका से परवश हुआ व्यक्ति जो कुछ भी पाप करता है, वह सब पाप 'गोचर्म' के बराबर भूमि दान कर देने से नष्ट हो जाता है और वह व्यक्ति शुद्ध हो जाता है।

'गोचर्म' अर्थात सवा किलोमीटर लंबी-चौड़ी भूमि। एक वृषभ तथा बछड़े-बछड़ियों सहित एक हजार गायें जितनी भूमि में आराम से इधर-उधर टहल सकें, घूम फिर सकें, उतनी लंबी चौड़ी भूमि 'गोचर्म' भूमि कहलाती है।

त्रीण्याहुरतिदानानि गावः पृथ्वी सरस्वती॥
तारयन्ति हि दातारं सर्वात् पापादसंशयम॥

(वृहस्पति स्मृति 18-19)

अर्थात- गोदान, भूमिदान और विद्यादान, ये तीन दान महादानों से भी बड़े अतिदान कहे गये हैं। अतिदान करने वाले का सब प्रकार के पापों से मुक्त होकर उद्धार हो जाता है।

भूमिदो भूमिहर्ता च नापरं पुण्यपापयोः

(वृहस्पति स्मृति 30)

अर्थात- भूमिदान करने से जितने महान पुण्य की प्राप्ति होती है, उतने ही पाप की प्राप्ति भूमि हरण करने वाले को होती है।

–हरिविष्णु अवस्थी

बुंदेलखंड के लोक साहित्य में भूदान

संत विनोबा का प्रभाव देखिये, लोक ने भूमिदान कर्ता की तुलना दानवीर कर्ण से करते हुए कहा है—

चौकड़िया :

जो कोउ भूमिदान कर दै है,
नाम जुगन-जुग रै हैं।
कीरत करण भये दान सिरोमनि,
इन समान बन जै हैं॥
सब दानन में दान सिरोमनि,
महादान दै दै हैं।
भइया कहन विनोबा जी की,
सुनो विरथां न जै हैं॥

गारी :

मानो-मानो ये वचन हमार,
भूमि कौ दान करौ।
सुनियो-सुनियो सज्जन ज्ञानी,
संत विनोबा की यह बानी॥
भूखन मरत मही में प्रानी,
जिनकी दशा न जाय बखानी।
जिन लौं होय जमी बेसुम्मार,
भूमि कौ दान करौ॥

मानो-मानो...

धरती दान करौ तुम भाई,
संत विनोबा देत दुहाई।
आओ इसमें करें सहाई,
दान सै सबकी होत भलाई।
मोह रहेगा पछताओगे,
चारों ओर कीर्ति पाओगे।
सुनियो सेठ और साहूकार,
सम्पत्ति को दान करौ।

मानो-मानो...

तुमने सम्पत कौड़ी-कौड़ी,
महनत करकै जो है जोड़ी।
खोलौ थोड़ी अब यह बंद तिजोरी,
कुछ राखो कुछ दे दे थोड़ी॥
झांसी जिला में ग्राम हमार,
कै बिजना नाम धरौ॥
राखौ अपने देश की लाज,
भूमि को दान करौ॥

मानो-मानो...

बुंदेलखंडी में ऐसी कई गारियां संग्रहीत हैं। स्थानीय बोली-भाषा एवं बुंदेली ध्वनियों में रचित इन गीतों ने स्थानीय जनता को बहुत प्रभावित किया था। बुंदेलखंड वासियों ने भूमिदान के महत्त्व को समझते हुए यथा समय विनोबाजी के भूमि दान में भरपूर आहुतियां डाली थीं। ❑

कोरोना वायरस के बाद की दुनिया

❑ युवाल नोआ हरारी

'सेपियंस : ए बीफ हिस्ट्री ऑफ ह्यूमनमाइंड', 'होमोडेयस : ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ टुमारो' तथा '21वीं सदी के लिए 21 पाठ' जैसी विश्व प्रसिद्ध पुस्तकों के लेखक युवाल नोवा हरारी इजराइली इतिहासकार हैं। कोरोना महामारी के वैश्विक संदर्भों की विहंगम पड़ताल करते हुए इस आलेख में लेखक ने दृश्य के पीछे की प्रवृत्तियों की ओर गूढ़ संकेत किये हैं। आंकड़ों की बाजीगरी में लिप्त पूंजीवादी दुनिया की ये प्रवृत्तियां बड़ी कुत्सित हैं। आंकड़े भी कैसे कैसे! हमारी निजता के आंकड़े; हमारे नाम, पते और गतिविधियों से बहुत आगे हमारी धड़कनों की गति, हमारा ब्लडप्रेशर, हमारे कफ-पित्त-वात की स्थिति, हमारे रोने और हंसने की वजहें जान लेने को व्यग्र इन शक्तियों का पर्दे के पीछे का खेल उजागर करते हुए लेखक दुनिया को सावधान रहने की चेतावनी देता है। आलेख यद्यपि बड़ा है, लेकिन महत्त्वपूर्ण है। **–सं.**

मानवता इस समय एक वैश्विक संकट से जूझ रही है। शायद हमारी पीढ़ी का यह सबसे बड़ा संकट है। अगले कुछ सप्ताहों में आम लोग और सरकारें जिस तरह के निर्णय लेंगी, वही यह तय करेगा कि आने वाले वर्षों में दुनिया की तक़दीर कैसी होगी। ये न केवल हमारी स्वास्थ्य व्यवस्था को नया आकार देगा, बल्कि हमारी अर्थव्यवस्था, राजनीति और संस्कृति को भी नए तरह से गढ़ेगा। हमारे लिए शीघ्रता से और निर्णायक रूप से क़दम उठाना बहुत ज़रूरी है। हमें अपने निर्णयों के दीर्घकालिक परिणाम को ध्यान में रखना होगा। जब हम विकल्पों का चुनाव करें तो ख़ुद से सिर्फ यही न पूछें कि इस ख़तरे से कैसे निपटा जाए, बल्कि यह भी सोचें कि इस आपदा के गुज़र जाने के बाद हम किस तरह की दुनिया में रह रहे होंगे। हां, यह तूफ़ान भी एक दिन थमेगा, मानवता बची रहेगी, हम में से अधिकांश अगले दिन के सूरज को देखने के लिए बचे रहेंगे, लेकिन यह दुनिया बदल चुकी होगी।

कई तात्कालिक आपातकालीन क़दम जीवन का अहम हिस्सा बन जाएंगे। लेकिन आफ़त होती ही ऐसी है। वह ऐतिहासिक प्रक्रिया को बहुत तेज़ी से आगे बढ़ा देती है। सामान्य दिनों में जिस निर्णय को लेने में वर्षों लग जाते हैं, उसे घंटों में ले लिया जाता है। कई बार ऐसी तकनीकों का सहारा लिया जाता है जो उपयुक्त नहीं होती हैं या यहां तक कि ख़तरनाक भी होती हैं क्योंकि कुछ नहीं करने का जोखिम बहुत बड़ा होता है। बड़े पैमाने पर होने वाले सामाजिक प्रयोगों का पूरा देश गिनी पिग की तरह निशाना बन जाता है। जब सारे लोग घर से काम करते हैं और एक-दूसरे से दूरी रखते हुए संवाद करते हैं तो क्या होता है? क्या होता है जब सारे स्कूल और विश्वविद्यालय ऑनलाइन हो जाते हैं? सामान्य समय में सरकारें, व्यवसाय और शैक्षिक बोर्ड इस तरह के प्रयोगों के लिए सहमत नहीं होंगे। लेकिन यह सामान्य समय भी तो नहीं है।

संकट के इस समय में हमारे पास विशेष रूप से दो महत्वपूर्ण विकल्प हैं। पहला है, अधिनायकवादी निगरानी और नागरिक सशक्तिकरण के बीच एक का चुनाव। दूसरा है, राष्ट्रवादी अलगाव और वैश्विक एकता के बीच किसी एक का चुनाव।

महामारी को रोकने के लिए संपूर्ण जनसंख्या को कुछ दिशानिर्देशों का पालन करने की ज़रूरत है। ऐसा मुख्यतः दो तरीक़े से किया जा सकता है। एक तरीक़ा है कि सरकार लोगों की निगरानी करे और उन लोगों को सज़ा दे, जो नियम को तोड़ते हैं। आज, मानव इतिहास में यह पहली बार हो रहा है कि तकनीक की वजह से सभी लोगों पर एक साथ हर समय निगरानी संभव है। पचास साल पहले, केजीबी अपने 24 करोड़ लोगों की 24 घंटे निगरानी नहीं कर पाता था और न ही केजीबी की यह क्षमता थी कि वह प्राप्त की गई सभी सूचनाओं को एक साथ प्रभावी रूप से संभाल सके। केजीबी को मानव एजेंटों और विश्लेषकों पर निर्भर रहना पड़ता था और उसके लिए यह संभव नहीं था कि वह हर नागरिक की निगरानी के लिए एक व्यक्ति की नियुक्ति कर दे। पर अब सरकारें हाड़-मांस के बने किसी जासूस की अपेक्षा अचूक सेंसरों और शक्तिशाली गणनाओं पर भरोसा कर सकती हैं।

कोरोना वायरस महामारी के खिलाफ़ अपनी लड़ाई में कई सरकारों ने निगरानी व्यवस्था को मोर्चे पर लगा दिया है। चीन इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण है। लोगों के स्मार्ट फोनों, चेहरा पहचानने वाले हज़ारों-लाखों कैमरों, अपने शरीर का तापमान रिकॉर्ड करने और अपनी मेडिकल जांच की अनुमति देने की सहज इच्छा रखने वाली जनता के बल पर चीनी अधिकारियों ने न केवल शीघ्रता से यह पता कर लिया कि कौन व्यक्ति कोरोना वायरस का संदिग्ध वाहक है, बल्कि वह उन पर नज़र भी रख रहे थे कि वे किस-किस के संपर्क में आते हैं। कई सारे ऐसे मोबाइल ऐप्स हैं, जो नागरिकों को संक्रमित व्यक्ति के आसपास मौजूद होने के बारे में आगाह करते हैं।

इस तरह की तकनीक पूर्वी एशिया तक ही सीमित नहीं है। इस्राइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू ने हाल ही में इस्राइल की सुरक्षा एजेंसी को कोरोना वायरस पर नज़र रखने कि लिए निगरानी तकनीकी के प्रयोग की अनुमति दी जो सामान्यतया आतंकवादियों से लड़ने के लिए प्रयोग में लायी जाती है। जब संबंधित संसदीय उपसमिति ने इसकी अनुमति देने से इनकार कर दिया तो नेतन्याहू ने 'आपातकालीन आदेश' के तहत इसकी अनुमति दे दी।

आप यह कह सकते हैं कि इन बातों में कुछ भी नया नहीं है। हाल के वर्षों में सरकारें लोगों की निगरानी, उनकी गतिविधियों पर नज़र

रखने और उनको मैनिपुलेट करने के लिए उन्नत तकनीकों का प्रयोग करने लगी हैं। और अगर हम सावधान नहीं रहे, तो यह महामारी निगरानी के इतिहास में एक बहुत बड़ा मोड़ साबित हो सकती है। सिर्फ इसलिए नहीं कि अब तक इनकी मदद लेने से इंकार करने वाले देश अब सामान्य रूप से इनका प्रयोग करेंगे, बल्कि इसलिए कि पहले जो निगरानी गुपचुप तरीक़े से होती थी, अब खुलेआम होगी।

अभी तक तो जब हमारी उंगलियां हमारे स्मार्टफ़ोन की स्क्रीन को छूती थीं और किसी लिंक पर क्लिक करती थीं, तो सरकारें यह जानने का प्रयास करतीं कि हमारी उंगलियां किस तरह के लिंक को क्लिक करती हैं। पर अब कोरोना वायरस के फैलने के बाद, दिलचस्पी का क्षेत्र बदल गया है। अब सरकारें आपकी उंगलियों का तापमान और उसकी चमड़ी के नीचे ब्लड-प्रेशर के बारे में जानना चाहती हैं।

आपातकाल की खिचड़ी

निगरानी को लेकर हम कहां खड़े हैं, इस बारे में जब हम कुछ समझने का प्रयास करते हैं तो जो एक समस्या हमारे सामने आती है, वह यह है कि हम में से कोई नहीं जानता है कि हमारी निगरानी आखिरकार कैसे हो रही है और आने वाले वर्षों में इसका स्वरूप क्या होगा। निगरानी तकनीक में बहुत ही तीव्र गति से बदलाव आ रहा है और जिसे हम 10 साल पहले तक वैज्ञानिक कल्पना मान रहे थे, आज पुरानी ख़बर बन गई है। उदाहरण के लिए, एक काल्पनिक सरकार की कल्पना कीजिए जो इस बात की मांग करती है कि उसका हर नागरिक बायोमेट्रिक ब्रैसलेट पहने, जो शरीर के तापमान और हृदय गति पर 24 घंटे नज़र रखता है। इससे प्राप्त होने वाले आंकड़े को जमा किया जाता है और सरकार इसका विश्लेषण करती है। इससे पहले कि आपको पता चले कि आप बीमार हैं, उनको यह भी पता चल जाएगा कि आप कहाँ-कहाँ गए थे और किस-किस से मिले थे। संक्रमण की चेन को काफ़ी हद तक छोटा किया जा सकेगा और यहां तक कि उसे पूरी तरह काटा जा सकेगा। इस तरह की व्यवस्था निश्चित रूप से महामारी को कुछ ही दिनों में रोक सकती है।

अब इसका नुकसान यह है कि यह तरीका एक बहुत ही ख़ौफ़नाक निगरानी व्यवस्था को वैध बना देगा। उदाहरण के लिए, मैंने सीएनएन लिंक पर क्लिक नहीं करके फ़ॉक्स न्यूज़ के एक लिंक पर क्लिक किया। यह लिंक आपको मेरे राजनीति विचारों और शायद यहां तक कि मेरे व्यक्तित्व के बारे में भी आपको बहुत कुछ बता देता है। मेरे शरीर के तापमान, ब्लडप्रेशर और हृदय गति की निगरानी करके आपको पता चल सकता है कि मैं किस बात पर हंसता हूं, किस बात पर रोता हूं और किस बात पर मैं गुस्सा हो जाता हूं।

यह याद रखना बहुत ही महत्वपूर्ण है कि बुखार और कफ की तरह ही गुस्सा, खुशी, बोरियत और प्यार जीव-वैज्ञानिक बातें हैं। वही तकनीक जो कफ का पता लगाती है, हंसी का भी पता लगाती है। अगर दुनिया की सरकारें बड़े पैमाने पर हमारा बायोमेट्रिक डाटा जमा करने लगती हैं, तो वे हमारे बारे में हमसे ज्यादा बेहतर जान सकते हैं, और इसके बाद वे न केवल हमारी भावनाओं के बारे में भविष्यवाणी कर सकते हैं बल्कि उन भावनाओं को मैनिपुलेट भी कर सकते हैं। वे हमें जो चाहें बेच सकते हैं, भले ही वह कोई उत्पाद हो या कोई राजनेता। बायोमेट्रिक निगरानी केम्ब्रिज एनेलिटिका की डाटा हैकिंग को हज़ारों साल पुरानी बना सकती है। ज़रा 2030 में उत्तरी कोरिया की कल्पना कीजिए, जब वह अपने सभी नागरिकों को 24 घंटे बायोमेट्रिक ब्रैसलेट पहनने कि लिए बाध्य कर देगा। अगर आप किसी नेता का भाषण सुनते हैं तो आपका ब्रैसलेट यह बता देता है कि भाषण पर आपका ख़ून गुस्से से खौला।

आप यह कह सकते हैं कि बायोमेट्रिक निगरानी सिर्फ आपातकालिक दौर के लिए है। एक बार जब आपातकालीन स्थिति समाप्त हो जाती है, तो इसे समाप्त कर दिया जाएगा। लेकिन अस्थाई क़दम के साथ सबसे ख़तरनाक बात यह है कि यह आपातकाल से भी ज्यादा ख़तरनाक होता है, विशेषकर इस वजह से क्योंकि एक न एक आपातकाल तो हमेशा मंडराता रहता है। उदाहरण के लिए, मेरे देश इजराइल ने 1948 की आज़ादी की लड़ाई के दौरान आपातकाल घोषित कर दिया और इसमें प्रेस पर प्रतिबंध और ज़मीन की ज़ब्ती से लेकर खिचड़ी बनाने तक के बारे में विशेष नियम बनाए (आप इसे मज़ाक़ मत समझिए) और इन क़दमों को उचित ठहराया। आज़ादी की लड़ाई कब की जीत ली गई पर इजराइल ने आज तक आपातकाल के समाप्त होने की घोषणा नहीं की, और 1948 में उसने जो 'अस्थाई' क़दम उठाए थे, उनमें से कई को समाप्त करने की घोषणा आज तक नहीं की है (शुक्र है कि खिचड़ी के बारे में आपातकाल की घोषणा को 2011 में समाप्त कर दिया गया)।

अगर कोरोना वायरस से होने वाला संक्रमण शून्य तक नीचे आ जाता है, तब भी आंकड़ों के भूखे कुछ देश यह दलील देंगे कि उन्हें निगरानी व्यवस्था को कुछ और समय तक बनाए रखना होगा क्योंकि उन्हें डर है कि कोरोना वायरस का दूसरा दौर आ सकता है या इसलिए कि मध्य अफ्रीका में इबोला की एक नई प्रजाति जन्म ले रही है। हमारी निजता को लेकर हाल के वर्षों में एक बड़ी लड़ाई चल रही है। कोरोना वायरस का संकट इस लड़ाई का चरम बिंदु हो सकता है। क्योंकि जब लोगों को निजता और स्वास्थ्य के बीच कोई एक विकल्प चुनने को कहा जाएगा तो वे सामान्यतया स्वास्थ्य को चुनेंगे।

साबुन-पुलिस

लोगों को निजता और स्वास्थ्य के बीच किसी एक को चुनने के लिए कहना, वास्तव में इस समस्या की जड़ है। क्योंकि यह एक मिथ्या विकल्प है। हमें निजता और स्वास्थ्य दोनों की ज़रूरत है। हम अपने स्वास्थ्य की रक्षा का चुनाव कर सकते हैं, पर कोरोना वायरस महामारी को निगरानी व्यवस्था को संस्थागत स्वरूप देकर नहीं, बल्कि नागरिकों को सशक्त बनाकर रोक सकते हैं। हाल के सप्ताहों में, कोरोना वायरस महामारी को क़ाबू में करने का सबसे सफल प्रयास दक्षिण कोरिया, ताइवान और सिंगापुर ने किया है। इन

देशों ने ट्रैकिंग ऐप्लिकेशन का कुछ हद तक प्रयोग किया है, पर सबसे ज्यादा व्यापक जांच और बेहतर जानकारी रखने वाली तथा सहयोग करने वाली जनता पर भरोसा किया है।

केंद्रीकृत निगरानी और कठोर दंड एकमात्र ऐसे उपाय हैं, जो लोगों को लाभकारी दिशानिर्देशों को मानने के लिए बाध्य करते हैं। जब लोगों को वैज्ञानिक तथ्यों से रू-ब-रू कराया जाता है, जब लोगों को पब्लिक अथॉरिटीज़ पर भरोसा होता है और वे उनको इन तथ्यों से अवगत कराते हैं, तो जनता अमूमन सही काम करती है, भले ही उनकी कोई निगरानी नहीं करे। स्व-उत्साहित और पूरी जानकारी रखने वाली जनता अमूमन निगरानी के अधीन और जाहिल जनता से कहीं ज्यादा शक्तिशाली और प्रभावी होती है।

उदाहरण के लिए, साबुन से अपने हाथों को धोना। मानव स्वच्छता के क्षेत्र में यह सबसे बड़ी बात है। यह सामान्य कार्य लाखों लोगों की जिंदगी हर साल बचा सकता है। वैज्ञानिकों को साबुन से हाथ धोने के महत्व का पता 19वीं सदी में चला। इससे पहले, यहां तक कि डॉक्टर और नर्स भी एक ऑपरेशन करने के बाद, बिना हाथ धोए दूसरे ऑपरेशन के लिए चले जाते थे। आज अरबों लोग अगर हर दिन अपना हाथ धोते हैं, तो इसलिए नहीं कि साबुन-पुलिस का उन्हें डर है बल्कि इसलिए क्योंकि वे हक़ीक़त जानते हैं। मैं साबुन से हाथ धोता हूं क्योंकि मैंने वायरस और जीवाणुओं के बारे में सुन रखा है, मैं समझता हूं कि इन सूक्ष्म जीवाणुओं के कारण बीमारियां फैलती हैं और मैं जानता हूं कि साबुन से हाथ धोकर मैं इनसे बच सकता हूं।

पर इस तरह का परिणाम और सहयोग हासिल करने के लिए आपको विश्वास की ज़रूरत होती है। यह ज़रूरी है कि लोग विज्ञान में विश्वास करें, पब्लिक अथॉरिटीज़ में विश्वास करें और मीडिया में विश्वास करें। पिछले कुछ सालों से गैरजिम्मेदार राजनीतिकों ने विज्ञान, पब्लिक अथॉरिटीज़ और मीडिया में लोगों के विश्वास की जानबूझकर अनदेखी की है। अब वही गैरजिम्मेदार राजनीतिक अधिनायकवाद का रास्ता यह कहते हुए अपना सकते हैं कि आप जनता से यह उम्मीद नहीं कर सकते कि वह कोई ठीक काम करेगी।

इस विश्वास को पिछले कई सालों में तोड़ा गया है और इसे तत्काल बहाल नहीं किया जा सकता। पर यह सामान्य समय नहीं है। संकट के समय में, दिमाग़ को भी बदलते देर नहीं लगती। आपका अपने भाई-बहन से सालों से मतांतर हो सकता है पर जब कोई आपात स्थिति आती है तो आप तुरंत अपने अंदर एक-दूसरे के लिए प्यार और विश्वास के सोते को उमड़ता पाते हैं। निगरानी की व्यवस्था के बदले, विज्ञान, पब्लिक अथॉरिटीज़ और मीडिया में आम लोगों के विश्वास को दुबारा क़ायम करने के प्रयास के लिए अब भी समय चूका नहीं है। हम नई तकनीक का बेशक प्रयोग करें, पर ये तकनीक जनता को सशक्त करे। मैं शरीर के तापमान और ब्लड प्रेशर पर नज़र रखने के पक्ष में हूं, पर इस डाटा का प्रयोग एक शक्तिशाली सरकार बनाने में नहीं होना चाहिए। बल्कि चाहिए कि यह डाटा मुझे एक बेहतर विकल्प के चुनाव में मदद करे और सरकार को उसके निर्णयों के लिए जिम्मेदार ठहराए।

अगर मैं 24 घंटे अपने मेडिकल स्थिति की निगरानी कर सकता हूं, तो मैं न केवल यह जान पाऊंगा कि मैं लोगों के स्वास्थ्य के लिए ख़तरा बन गया हूं, बल्कि यह भी कि कौन सी बात मेरी सेहत कि लिए अच्छी है। अगर मैं कोरोना वायरस के बारे में भरोसेमंद आंकड़े का विश्लेषण कर पाता हूं, तो मैं यह जान पाऊंगा कि सरकार सही कह रही है या नहीं और वह इस महामारी से लड़ने के लिए सही नीति अपना रही है कि नहीं। जब भी जनता निगरानी के निमित्त आवाज़ उठाती है, तो याद रखें कि यह निगरानी की वही तकनीक है, जिसका लोग भी सरकार की निगरानी के लिए प्रयोग करते हैं।

इस तरह, कोरोना वायरस महामारी नागरिकता की वास्तविक परीक्षा है। आने वाले दिनों में, हमें षड्यंत्र के निराधार सिद्धांतों, अपना हित देखने वाले राजनीतिकों, वैज्ञानिक आंकड़ों और स्वास्थ्य विशेषज्ञों में से किसी एक का चुनाव करना है। अगर हम सही विकल्प चुनने में विफल रहते हैं तो हम अपनी बहुमूल्य स्वतंत्रता को यह सोचते हुए गिरवी रख देंगे कि अपने स्वास्थ्य को बचाने का केवल यही तरीक़ा है।

हमें चाहिए एक वैश्विक योजना

दूसरा विकल्प, जिस पर हमें विचार करना है, वह है राष्ट्रवादी अलगाव और वैश्विक एकता में से एक को चुनने की। ख़ुद महामारी और इससे अर्थव्यवस्था को होने वाला नुक़सान वैश्विक समस्या है। सिर्फ वैश्विक सहयोग से ही इसका प्रभावी हल हो सकता है।

सबसे पहले, वायरस को परास्त करने के लिए हमें वैश्विक स्तर पर सूचना को साझा करना चाहिए। मानव को वायरस पर यह बहुत बड़ी बढ़त हासिल है। चीन और अमेरिका में संक्रमण फैलाने वाले कोरोना वायरस आपस में बात करके मानव में संक्रमण फैलाने के तरीक़ों पर ग़ौर नहीं कर सकते। लेकिन चीन कोरोना वायरस से लड़ने के बारे में अमरीका को बहुमूल्य सलाह दे सकता है। इटली के किसी डॉक्टर को सुबह-सुबह मिलान में जो जानकारी मिलती है, उससे वह शाम को तेहरान में किसी की जान बचा सकता है। जब यूके की सरकार इस बारे में हिचक रही है कि वह कौन सी नीति अपनाए, तो उसे कोरिया से इस बारे में सलाह मिल सकती है, जो ख़ुद उस स्थिति से एक महीने पहले गुज़र चुका है। लेकिन ऐसा हो, इसके लिए हमें वैश्विक सहयोग और विश्वास की ज़रूरत है।

आने वाले दिनों में हम में से प्रत्येक को वैज्ञानिक डाटा और स्वास्थ्य विशेषज्ञों में भरोसा करना चाहिए न कि अपना हित साधने वाले नेताओं के षड्यंत्र के बेतुके सिद्धांतों में।

विभिन्न देशों को सूचनाएं खुलेआम साझा करनी चाहिए, दूसरों से विनम्रता से सलाह लेनी चाहिए और प्राप्त होने वाले डाटा और तथ्यों पर विश्वास करना चाहिए। हमें मेडिकल उपकरणों, विशेषकर जांच किट और सांस की मशीनों के उत्पादन और वितरण में वैश्विक स्तर पर प्रयास करने की ज़रूरत है। हर देश इस बात को स्थानीय रूप से करे और जो भी उपकरण उसके हाथ लगे, उसे वह अपने पास ही जमा कर ले, इसके बजाय वैश्विक स्तर पर आपसी सहयोग से इसका उत्पादन बढ़ाया जा सकता है और जीवन-रक्षक इन उपकरणों को सब तक न्यायोचित तरीक़े से पहुंचाया जा सकता है। जैसे कोई देश युद्ध के समय में अपने प्रमुख उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करता है,

कोरोना वायरस के खिलाफ़ मानव की लड़ाई के लिए ज़रूरी है कि हम उत्पादन का 'मानवीकरण' करें। ऐसे धनी देशों को, जहाँ सिर्फ कुछ ही कोरोना वायरस के मामले हुए हैं, चाहिए कि वह उन देशों को, जहां ये मामले अधिक हुए हैं, यह सोचकर अपने बहुमूल्य उपकरण दे कि जब उसको ज़रूरत होगी तो दूसरे देश भी उसकी मदद को आगे आयेंगे।

हम मेडिकल कर्मियों के सामूहिक प्रयोग का प्रयास भी इसी तरह कर सकते हैं। इस समय जो देश कम प्रभावित हैं, उन्हें अपने मेडिकल स्टाफ़ को ज्यादा प्रभावित क्षेत्रों में भेजना चाहिए ताकि वे उनकी मदद कर सकें और बहुमूल्य अनुभव प्राप्त कर सकें। अगर बाद में महामारी को लेकर फ़ोकस में बदलाव आता है, तो उन देशों से वापसी में मदद मिल सकती है।

आर्थिक मोर्चे पर भी वैश्विक सहयोग की ज़रूरत है। अर्थव्यवस्था और आपूर्ति चेन की वैश्विक प्रकृति को देखते हुए, अगर हर सरकार अपना-अपना काम खुद ही करती है और इस प्रक्रिया में दूसरे का ख़याल नहीं रखती है तो इसका परिणाम बहुत ही अराजक होगा तथा संकट और गंभीर हो जाएगा। हमें वैश्विक कार्य योजना की ज़रूरत है और हमें यह बहुत जल्दी करना होगा।

एक अन्य ज़रूरत है, यात्रा पर वैश्विक सहमति की। सभी अंतर्राष्ट्रीय यात्राओं पर महीनों तक प्रतिबंध लगाना मुश्किलों को बढ़ाएगा और कोरोना वायरस के खिलाफ़ लड़ाई में रुकावट डालेगा। दुनिया के देशों को चाहिए कि वे न्यूनतम और आवश्यक यात्रा की अनुमति दें और वैज्ञानिकों, डॉक्टरों, पत्रकारों, राजनीतिकों तथा व्यवसायियों को सीमा को पार करने की इजाज़त दें। यात्रियों की उनके देश में यात्रा से पहले जांच की जाए, इसे वैश्विक समझौते से संभव बनाया जा सकता है। जब आप जानते हैं कि विमान में सिर्फ ठीक तरह से जांच किए गए यात्रियों को ही जाने की अनुमति दी गई है, तो आप ऐसे यात्रियों का अपने देश में स्वागत करने के लिए तैयार होंगे।

दुर्भाग्य से, इस समय कोई देश ऐसा कुछ भी नहीं कर रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को सामूहिक लकवा मार गया है। ऐसा लगता है कि कोई विचारशील व्यक्ति दुनिया में नहीं बचा है। कुछ सप्ताह पहले ही दुनिया के नेताओं की आपात बैठक की उम्मीद की जा रही थी, ताकि कार्रवाई की एक सामूहिक योजना बनाई जा सके, पर किसी तरह की कोई योजना नहीं बनी।

इससे पहले जो वैश्विक संकट हुए हैं, जैसे कि 2008 का वित्तीय संकट और 2014 की इबोला महामारी, तब अमरीका ने वैश्विक नेतृत्व दिया। पर वर्तमान अमरीकी प्रशासन ने अपनी नेतृत्व क्षमता से हाथ धो लिया है। उसने यह स्पष्ट कर दिया है कि उसको सिर्फ अमरीका की महानता से मतलब है, न कि मानवता की चिंता से।

इस प्रशासन ने तो अपने निकटतम सहयोगियों के दामन से भी हाथ छुड़ा लिया है। जब उसने ईयू से आने वाली सभी उड़ानों पर प्रतिबंध लगा दिया तो इस बारे में उसने ईयू को किसी तरह की अग्रिम जानकारी देना भी उचित नहीं समझा। उसने जर्मनी की एक दवा कंपनी को कोविड-19 के वैक्सीन का अधिकार प्राप्त करने के लिए एक अरब डॉलर की राशि देने का शर्मनाक प्रस्ताव दिया। अगर वर्तमान प्रशासन अपना रास्ता बदलता भी है और कोई वैश्विक कार्य योजना बनाता है, तो भी इस बात की उम्मीद कम है कि कोई भी ऐसे नेता की बात मानेगा, जो किसी भी तरह की जिम्मेदारी लेने से बचता है, जो अपने ग़लती स्वीकार नहीं करता है और जो नियमित रूप से सारा श्रेय खुद लूट लेता है, जबकि दोष दूसरों के हिस्से में छोड़ देता है।

अमरीका ने जो जगह ख़ाली की है, अगर उसे कोई देश नहीं भरता है तो न केवल वर्तमान महामारी को रोकना ज्यादा मुश्किल होगा, बल्कि उसकी यह विरासत अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को आने वाले वर्षों में विषाक्त बनाती रहेगी। लेकिन यह भी सही है कि हर संकट एक अवसर लेकर आता है। हमें उम्मीद करनी चाहिए कि वर्तमान महामारी मानवता को यह समझाने में मदद करेगी कि वैश्विक समुदाय में फूट होना कहीं बड़ा संकट है।

मानवता को विकल्प चुनना ज़रूरी है। क्या हम फूट के रास्ते पर चलेंगे या हम वैश्विक एकता की राह पकड़ेंगे? अगर हम फूट के रास्ते को चुनते हैं, तो न केवल हम संकट को और बढ़ाएंगे, बल्कि भविष्य में इससे भी बड़ी विपत्ति को झेलने कि लिए अभिशप्त हो जाएंगे। अगर हम वैश्विक एकता बनाने में सफल रहते हैं, तो यह न केवल कोरोना वायरस के खिलाफ़, बल्कि भविष्य में होने वाली सभी महामारियों और संकटों से भी हमारी जीत होगी, जो 21वीं सदी में हमारे सिर पर विपत्ति की तरह टूट सकते हैं। ❑

कर्फ्यू है, एहतियात से रहिएगा
(कश्मीर से चिट्ठी आयी है!)

पानी कम गिराइएगा, नमक कम खाइएगा।
जाफरान की भी चाय बनाई जा सकती है,
आटे में नमक डाल कर
पानी उबालकर भी रोटी खाई जा सकती है।
चावल की पीछ में छौंक से
एक वक्त की सालन चलाई जा सकती।।
दो कुनबे एक चुल्हे पर खाना पकाएं,
साझी लकड़ी जलाएँ ,साथ बैठ खायें।।
ऐसे करके बरकत रहती है
चावल की पीपी, तेल की कुप्पी
ज्यादा दिन चलती है।।
माँ जी की दवाई ख़त्म हो तो
पानी में हल्दी घोलने से आराम आएगा।
अब्बा जी को गुनगुना घी
घुटनो में लगाइएगा।।
बच्ची घूमने की जिद करें तो
बॉलकनी में कंधे पर घुमा आइएगा।।
खिड़की में से पड़ोसी से बात करते रहना।
कुछ कमदिल होते है, दिलासे देते रहना।
उधार लेने-देने में शरम नहीं है,
दहशत के बाद अमन में लौटाते रहना।
किसी नाके पर पुलिस पूछे तो
हाँ जी, ना जी में कहना।
आधार, वोटर, लाइसेंस खीसे में रखना।
और कई बातें हैं, जो तुम्हें सिखानी है
कुछ दिन की बात है,
आपको कौन-सा हमारी तरह
कर्फ्यू में उमर बितानी है।।

लॉकडाउन के कारण ध्वस्त होगी कृषि आर्थिकी

अन्नदाता के लिए प्रभावकारी राहत पैकेज दे सरकार

❑ वल्लभाचार्य पाण्डेय

विश्वव्यापी कोरोना संक्रमण के कारण हुए लॉकडाउन का प्रभाव देश में किसानों पर बुरी तरह पड़ा है. इससे आने वाले समय में देश की कृषि आर्थिकी ध्वस्त हो सकती है. खेती किसानी के तमाम काम प्रतिकूल तरह से प्रभावित हुए है और किसान तथा कृषि पर आधारित अन्य गतिविधियों में लगे लोगों के समक्ष गम्भीर संकट खड़ा हो गया है. इन परिस्थितयों में सरकार को किसानों की समस्याओं को देखते हुए प्रभावकारी राहत पैकेज की घोषणा करनी चाहिए. अभी तक किसानों के लिए घोषित किये गये उपाय जमीनी स्तर पर राहत देने के लिए पर्याप्त नही हैं.

जहाँ एक तरफ गेहूं, जौ आदि की कटाई और मड़ाई का काम अटका हुआ है, तो वहीं दूसरी तरफ आलू, प्याज, लहसुन आदि के भण्डारण का. जायद की खेती पिछड़ती जा रही है. उड़द, मक्का, पशु चारा और सब्जियों की बुआई के लिए बीज, खाद नहीं मिल पा रहे हैं. गाँव गिरांव के किसान न तो उसे खरीदने शहर तक पहुंच पा रहे हैं, न ही शहरों के दुकानदारों को सभी वस्तुओं की आपूर्ति ही हो पा रही है. ऐसे में खेती किसानी का काम लगभग ठप पड़ा हुआ है.

कुछ इलाकों में सरसों की फसल तो जैसे तैसे खलिहान या घर तक पहुंच गयी लेकिन गेहूं की कटाई का काम अभी प्रारम्भ भी नही हो पाया है. क्यूंकि इस कार्य के लिए हार्वेस्टर और कम्पाइन वाले प्रायः पंजाब या हरियाणा से सीजन प्रारम्भ होने पर आया करते थे, जो अभी तक नही आ पाए हैं. यद्यपि कुछ स्थानीय लोग भी हार्वेस्टर और कम्पाइन रखते हैं, लेकिन उसको चलने वाले ड्राइवर और ऑपरेटर बाहर से ही आते हैं, जो इस बार आ नही पाए हैं. शहरों से हुए पलायन के चलते कृषि मजदूरों की उपलब्धता गाँवों में हुई है, लेकिन जहाँ बड़ी खेती है, वहां उनके द्वारा कटाई के कार्य को समय से पूरा कर पाना कठिन से लग रहा है. एक गाँव से दूसरे गाँव तक मजदूरों का खेत कटाई के लिए पहुंच पाना भी दुष्कर हो रहा है. उस पर मौसम का बदलता तेवर किसानों के माथे पर चिंता की लकीर खींच दे रहा है. जिन गाँवो में स्थानीय मजदूर हैं भी, वे कोरोना संक्रमण के भय से खेतों में जाने की हिम्मत नही जुटा पा रहे है. गेहूं की कटाई, दंवाई उसके बाद अनाज और भूसे का भण्डारण कर पाना किसानों के समक्ष एक चुनौती बन गया है.

सब्जियों के उत्पादक दोहरी मार झेल रहे है. अगर वाराणसी जिले और आस पास का आंकड़ा लें तो पंचकोशी, राजातालाब, सैदपुर, बड़ा गाँव जैसी सब्जी मंडियों में बाहर के जिलों से आने वाले व्यापारी लगभग नगण्य हैं, अतः सब्जियों की मांग केवल स्थानीय होकर रह गयी है। ऐसे में उत्पादक को कोई बाजार नही मिल रहा है, कच्चे प्रयोग में लायी जाने वाली सब्जियां जैसे खीरा, ककड़ी, मूली, टमाटर, गाजर, धनिया पत्ता आदि कोरोना संक्रमण के भय से लोग लेने से बच रहे हैं. सरकारी विभागों द्वारा इस सम्बन्ध में जारी विज्ञापनों ने और भ्रम की स्थिति पैदा कर दी है. इन सब्जियों की बुवाई जनवरी फरवरी माह में ही हो गयी थी, अब उत्पादन तेजी से हो रहा है. फसल को तैयार करने में किसान की सारी पूँजी लग चुकी है. खेत जुताई से लेकर, बीज, खाद, रसायन, सिंचाई आदि में निवेश करने के बाद जब फसल की लागत भी न निकले तो छोटे उत्पादकों के समक्ष संकट आना स्वाभाविक है. नतीजा यह है कि बहुत से इलाकों में लोग सब्जी को उखाड़ कर खेत खाली कर रहे हैं, जिससे कम से कम खेत की उर्वरता बची रहे. इन्ही फसलों की आय से आगे जायद की खेती की तैयारी होनी थी, जो अब संशय में आ गयी है. किसानों के पास और पूँजी नही बची है. इस स्थिति में गन्ना के किसान भी बेबस महसूस कर रहे है. किसान सम्मान योजना की क़िश्त इन नुकसानों की भरपाई कर पाने में नाकाम साबित हो रही है. जो किसान भूमिहीन है और अधिया, बंटाई या लगान पर भूमि लेकर खेती करते हैं, उनके सामने और गम्भीर संकट है, क्योंकि पूरी पूँजी लगाने के बाद भी उनका हाथ खाली ही है और अगर कोई सरकारी राहत योजना आती भी है, तो उसका लाभ उन्हें मिलने वाला नही है, क्योंकि वह लाभ तो भूमि स्वामी को मिलेगा।

देश व्यापी लॉकडाउन पशु पालकों की भी स्थिति चिंता जनक है. दूध के उत्पादन से जुड़े लाखों परिवारों के समक्ष गम्भीर संकट आ खड़ा हुआ है. मिठाई की दुकानों, होटल आदि में होने वाली दूध, खोया, पनीर, छेना आदि की खपत लगभग शून्य हो गयी है, इस प्रकार दूध की खपत घट कर 40 प्रतिशत पर आ गयी है, प्रति वर्ष गर्मी में दूध का खुला बाजार 50 रूपये लीटर हुआ करता था, जो इस समय 15 रूपये पर आ गया है, जिससे लागत भी नहीं निकल पा रही है. उधर भूसे की आपूर्ति न होने के कारण इसकी दर 1500 रूपये प्रति कुंतल तक चली गयी है, वह भी कहीं कहीं मिल नही पा रहा है. चूनी, चोकर, खली जैसी वस्तुओं की भी बाजार में आपूर्ति कम हो जाने से मूल्य कई गुने तक बढ़ा है, जिसका प्रतिकूल असर पशु पालकों पर पड़ा है. इन वस्तुओं के मूल्य नियंत्रण के लिए किये जाने वाले सरकारी प्रयासों का जमीनी स्तर पर अभी तक कोई प्रभाव नही दिखाई पड़ा है. खूंटे पर बंधे जानवर को किसी भी हाल में चारा तो देना ही होगा, यह चिंता प्रायः सभी पशुपालकों को खाए जा रही है. इसी प्रकार मत्स्यपालन का कार्य करने वाले हों या फूल उत्पादन से जुड़े लोग, सभी इस लॉक डाउन से बुरी तरह प्रभावित हुए हैं, जिससे उबर पाना आने वाले समय में एक बड़ी चुनौती होगी.

कुल मिलाकर कोरोना संक्रमण के संकट के दौर में आज देश का अन्नदाता तमाम मुश्किलों का सामना करते हुए तमाम परेशानियों को झेल रहा है और संकट काल बीतने के बाद देश को आर्थिक मंदी के दौर से उबारने में अपने आपको समर्पित करने को तत्पर है. ऐसे में सरकार को भी किसानों के प्रति सहृदय नजरिया रखते हुए कुछ फौरी रियायतों की घोषणा करनी होगी, जिससे उनका मनोबल न टूटे. किसान सम्मान राशि की नियमित क़िश्त खाते में हस्तांतरित किया जाना पर्याप्त नही होगा. खाद, बीज, रसायन, मड़ाई, जुताई, सिंचाई, किसान क्रेडिट कार्ड आदि पर कुछ ठोस राहत देने की पहल होनी चाहिए साथ ही भूमिहीन किसान और कृषि मजदूरों के लिए भी तत्काल प्रभावकारी राहत योजना की जरूरत है. ❑

ऑल-आउट लॉकडाउन के ख़तरे

❑ ज्यां द्रेज

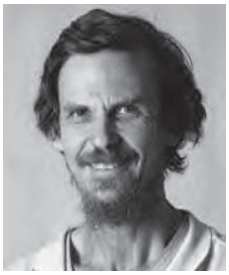

कोरोना वायरस फैलने के सन्दर्भ में भारत पर दोहरा संकट मंडरा रहा है, एक स्वास्थ्य संकट और दूसरा आर्थिक संकट। हताहतों के मामले में, स्वास्थ्य संकट फिर भी अभी बहुत सीमित है। (कोरोना से अब तक देश में 400 से अधिक मौतें हुई हैं, जबकि सामान्य औसत से यहां अब तक हर साल अस्सी लाख लोग मर जाते हैं), लेकिन कोरोना मृत्युदर तेजी से बढ़ रही है। इस बीच, आर्थिक संकट भी पूरी ताकत से बढ़ रहा है, रोज कुआं खोदने और पानी पीने वाले करोड़ों दिहाड़ी (डेली वेजर) मजदूर खेत किसानों पर संकट दिन पर दिन बढ़ता ही जाएगा। साथ ही अमीर-गरीब पर समान चोट करने वाला कोरोना वायरस गरीबों को ज्यादा ही नुकसान पंहुचाने वाला है।

गतिरोध की बाध्यता

प्रवासी श्रमिकों, ठेला पटरी विक्रेताओं, संविदा/अनुबंध श्रमिकों, असंगठित अनौपचारिक क्षेत्र की लगभग पूरे जनशक्ति पर इस आर्थिक सूनामी का ग्रहण लगने वाला है । महाराष्ट्र में बड़े पैमाने पर छंटनी ने प्रवासी कामगारों को घर वापस जाने के लिए मजबूर किया है, अधिकांश को बकाया भुगतान भी नहीं हुआ है और वे आपाधापी में गृहराज्य वापस हो लिए है । उनमें से कई ट्रेन बस आदि परिवहन रद्द होने की वजह से महाराष्ट्र और अपने घरों के बीच फंसे हुए हैं। दुकानों, फैक्ट्रियों कार्यालयों आदि के बंद होने से महाराष्ट्र में फैला आर्थिक ठहराव अन्य राज्यों में बेरोजगारी, भूख, बीमारी और अपराध आदि के रूप में फैलेगा, जिसके सामान्य स्थिति में वापस लौटने की उम्मीद भी कम ही है।

यह आर्थिक संकट तत्काल, बड़े पैमाने पर राहत उपायों की माँग कर रहा है । महामारी को धीमा करने के लिए लॉकडाउन की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन गरीब लोग घर पर बेकार नहीं रह सकते। यदि उन्हें घर पर रहने के लिए कहा जाता है, तो उन्हें मदद की आवश्यकता होगी। इस संबंध में एक अच्छी सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की कसौटी पर भारत और समृद्ध देशों के बीच काफी अंतर है। कनाडा या इटली में रहने वाले औसत परिवार कम से कम कुछ समय के लिए अपने निजी सामर्थ्य पर तालाबंदी कर सकते हैं, लेकिन भारतीय गरीबों का प्रतिदिन का रोजगार न रहने की स्थिति में जीवित बचे रह पाना असम्भव है।

सामाजिक योजनाओं पर ध्यान दें

समय की माँग है कि पेंशन, सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस), मिड डे मील (दोपहर के भोजन) और महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) का समर्थन बढ़ाते हुए मौजूदा आर्थिक व सामाजिक-सुरक्षा योजनाओं का बेहतर, जिम्मेदार और प्रभावी उपयोग किया जाए। उपरोक्त के साथ साथ पेंशन का अग्रिम भुगतान, उन्नत पीडीएस राशन तंत्र (जिसमें अंगूठा लगाने की बाध्यता, सर्वर फेल होने की शिकायत आदि को नजरअंदाज करके वितरण सुनिश्चित किया जाए), मनरेगा मजदूरी बकाया का तत्काल भुगतान सुनिश्चित किया जाय। स्कूलों और आंगनवाड़ियों में बच्चों के घरों में भोजन वितरण का प्रयास हो। व्यावहारिक और ध्यान देने की बात है कि कुछ राज्यों ने पहले से ही इस तरह के जनोपयोगी कदम उठाए हैं, लेकिन राहत उपायों को बेहद तीव्र विस्तार की आवश्यकता है। इसके लिए केंद्र सरकार से बड़ी धनराशि अवमुक्त होनी चाहिए। सरकार को कॉर्पोरेट बेलआउट्स पर अपने संसाधनों को जाया करने से बचते हुए अर्थव्यवस्था के अन्य संकट-प्रभावित क्षेत्रों को मजबूती देने का काम करना चाहिए।

आवश्यक सेवाओं को बंद करने की प्रवृत्ति से लोगों की कठिनाइयों के बढ़ने का खतरा है। कई राज्यों में सार्वजनिक परिवहन, प्रशासनिक कार्यालय, अदालत की सुनवाई, मनरेगा परियोजनाएं और यहां तक कि टीकाकरण अभियान तक स्थगित कर दिए गए हैं। ये निर्णय स्वास्थ्य की दृष्टि से निश्चित रूप से उचित हैं, लेकिन समानांतर तौर पर इनके बंद होने से प्रतिकूल प्रभाव पैदा होने की भी संभावना है। याद रखें, हम न केवल स्वास्थ्य संकट, बल्कि आर्थिक संकट से भी जूझ रहे हैं। भले ही सार्वजनिक सेवाओं को बंद करने से स्वास्थ्य संकट को रोकने में मदद मिलती है, साथ ही तमाम निर्णयों को आर्थिक परिणामों की कसौटी पर कसने की भी जरूरत है।

विभिन्न एहतियाती उपायों के मामले का आकलन करने के लिए हमें दोहरे मापदंड को ध्यान में रखना चाहिए। जब आप घर पर रहने का फैसला करते हैं, तो इसके लिए दो संभावित मकसद होते हैं—एक आत्म-सुरक्षा का मकसद और दूसरा सार्वजनिक सुरक्षा का मकसद। पहले मामले में, आप संक्रमित होने के डर से खुद को लॉकडाउन (सुरक्षित) करते हैं। दूसरे में, आप वायरस के प्रसार को रोकने के लिए सामूहिक प्रयासों और सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भाग लेते हैं।

समाज में बहुत कम ही लोग आत्म-सुरक्षा की दृष्टि से सावधानियों के बारे में सोचते हैं। भारत में हर साल चार लाख लोग तपेदिक से मरते हैं, फिर भी हम इसके खिलाफ कोई विशेष सावधानी नहीं रखते हैं, जबकि टीका से लेकर दवा तक सब कुछ उपलब्ध है। अभी के लिए मुख्य बात स्वयं की रक्षा करना नहीं है, बल्कि महामारी को रोकने के लिए सामूहिक प्रयासों में योगदान करना है।

रचनात्मकता प्रदर्शित करें

बचाव के उपाय के रूप में सार्वजनिक सेवाओं को बंद करना एक सामान्य और स्वीकृत तर्क है। इस समय मुख्य उद्देश्य जनता के व्यापक विषय से जुड़ा हुआ है। इसलिए संरक्षण के मुद्दे के साथ-साथ बंद के संभावित आर्थिक परिणामों को भी शामिल करना चाहिए।

जब कोई सेवा कोई प्रमुख स्वास्थ्य खतरा पैदा करती है, तो सार्वजनिक उद्देश्य से निश्चित रूप से इसे बंद करने का निर्णय किया

... क्रमशः पृष्ठ 18 पर

धारावाहिक

बा की चिता से बापू का संवाद

❑ गिरिराज किशोर

पहला गिरमिटिया जैसा चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके गिरिराज किशोर ने जब बा पर कलम उठायी, तो बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। उनके बारे में उपलब्ध जानकारियां नहीं के बराबर थीं। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी, वहीं 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें उनके सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन सब जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है उपन्यास 'बा' का अंतिम अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहा था। इस अंतिम कड़ी के बाद हमें सर्वोदय जगत के पाठकों से अपेक्षा है कि वे पत्र लिखकर हमें अपनी प्रतिक्रियाओं से अवगत करायें कि यह आयोजन कैसा लगा। आगे के लिए पाठकों से सुझाव भी आमंत्रित हैं। –सं.

23 फरवरी को, बा के शव को दर्शनार्थ रख दिया गया। लोग आने लगे थे। मित्र और संबंधी ही लगभग डेढ़ सौ आ चुके थे। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सियासी और अंग्रेज सभी कौमों के लोग आ रहे थे। सबने प्रणाम करके या सिर नवाकर बा के पार्थिव शरीर को अंतिम विदाई दी। फूलों के ढेर लग गये। जिन पंडितों ने महादेव भाई का क्रियाकर्म कराया था, वे भी आ गये थे। शांति कुमार नाम के एक व्यक्ति पारिवारिक मित्र की तरह थे, वे काफी भाग-दौड़ कर रहे थे। देवदास के साथ भाई की तरह जुटे हुए थे। उन्होंने बापू के सामने चंदन की लकड़ियां लाने का प्रस्ताव रखा। बाबू ने कहा, 'यह आपकी उदारता है लेकिन एक गरीब आदमी की पत्नी का अग्नि संस्कार चंदन की लकड़ियों में किया जाये, यह अच्छा नहीं लगता। देह को क्या अंतर पड़ता है, चंदन की लकड़ी में जले या सामान्य लकड़ियों में...'

जेल का सुपरिंटेंडेंट सुन रहा था, उसने धीरे से कहा, 'बापू, मेरे पास कुछ चंदन की लकड़ियां हैं, उनका उपयोग हो सकता है।'

'आपके पास इतनी चंदन की लकड़ियां कहां से आयीं कि उनसे दाह संस्कार संपन्न किया जा सके?'

पहले वह झिझका। फिर शायद उसने सोचा कि सच्चाई बता देनी चाहिए। उसने संकोच के साथ कहा, 'इक्कीस दिन के उपवास के समय आपकी हालत नाजुक हो गयी थी, तब चंदन की लकड़ियां मंगाई गयी थीं। सरकार हर एहतियात बरत रही थी।'

बापू उसके अंतर्द्वन्द्व को समझकर मुस्कुराये और बोले, 'सरकार द्वारा मंगायी गयी इन लकड़ियों का प्रयोग होना चाहिए, मैं नहीं तो मेरी पत्नी के लिए ही सही। सरकार का पैसा व्यर्थ न जाये, क्यों?'

बापू ऐसे समय में भी व्यंग्य कर सकते हैं, इस बात को जानकर भी लोग न मुस्कुरा पाये, न कुछ कह पाये।

चिता महादेव भाई की समाधि के बराबर में ही रची गयी थी, मां और मुंहबोला बेटा पास-पास...। बा की अर्थी उठाकर वहां ले जायी गयी, जहां चिता बनी थी। बापू के कंधे पर बा की चिता देखकर लोगों की आंखों में आंसू छलक आये थे। बापू भी बा के प्रति अपने इस अंतिम दायित्व को निबाहते हुए अपनी भावनाओं को समायोजित करते जा रहे थे और स्थिर कदमों से बढ़ रहे थे। शव को चिता पर रखकर सर्वधर्म प्रार्थना करायी। कुरान, गीता और न्यू टेस्टामेट के अंश बापू ने स्वंय पढ़े। मीराबेन ने ओल्ड टेस्टामेंट के साम का पाठ किया। गिल्डर बा से बहुत जुड़ गये थे, उन्होंने कांपती आवाज में जोरेस्त्रियन ग्रंथों के अंश पढ़े। आश्रम से आये संवासियों ने भजन गाये। देवदास ने मंत्रोच्चारण के बीच मुखाग्नि दी। बापू अपनी लकड़ी के सहारे प्रार्थना की मुद्रा में तब तक खड़े रहे, जब तक अग्नि ने बा के शरीर को अपने अंदर समाहित नहीं कर लिया। जलती चिता के आलोक में सबके चेहरे देदीप्यमान हो उठे थे। लपटें कभी बापू के चेहरे पर प्रकम्पित होती नजर आती थीं और कभी स्वयं मद्धिम पड़ जाती थीं।

बापू के बराबर में महादेव भाई की जगह आज प्यारे लाल खड़े थे। बा की चिता का ताप बराबर में बनी समाधि में लेटे महादेव भाई भी अनुभव कर रहे होंगे। दोपहर का सूरज गर्माने लगा था। मीराबेन ने बापू पर छाता लगा लिया था। बाद में अतिथियों को विदा करके बापू पेड़ के नीचे रखी कुर्सी पर आकर बैठ गये। वहां बचे हुए साथियों के, कमरे में जाकर आराम करने के आग्रह को अनदेखा करके, कुछ ही देर पहले प्रज्वलित अग्नि को राख में बदलते देखते रहे। अग्नि ही राख में बदलती है...स्वयं को भी और दूसरों को भी। सूर्यास्त हो रहा था। उस राख में भी इक्की-दुक्की अग्निशिखाएं बीच-बीच में चमककर अपनी उपस्थिति का आभास करा रही थीं।

रामदास जब पहुंचे, चिता जल रही थी। रामदास अपने दुःख-सुख के बारे में मुखर नहीं थे। वे पिता को प्रणाम करके चिता के पास धरती पर पालथी लगाये बैठे रहे। उस रात के लिए रामदास और देवदास को महल में रहने की अनुमति दे दी गयी थी। वे दोनों भाई बापू के पास जाकर बैठे तो आंखों से टप-टप आंसू झरने लगे। बापू ने उनके कंधों पर हाथ रखे, 'मेरा तो बासठ साल का साथ था। कभी-कभी सोचता था, दोनों साथ-साथ जायें कि, पर मृत्यु अपनी गोपनीयता

बनाये रखने के लिए हर एक को अलग-अलग ले जाती है। मैंने यही प्रार्थना की थी कि अगर ऐसा न हो तो पहले कस्तूर को बुला लेना। मैं तो रह लूंगा पर मुझ जैसे आदमी के साथ रहने के बाद, वह किसके साथ रह पायेगी...?

थोड़ी देर बाद स्वतः बोले, 'काम तो थकाता है सो थकाता है, दुःख और बिछुड़ना भी थका-थकाकर मार डालता है, जाओ अब जाकर आराम करो...।'

'आप?' रामदास आने के बाद पहला शब्द बोला था, नहीं तो रोता ही रहा था।

'बा के बिना जीने की आदत डालूंगा...' दोनों भाइयों की हिचकी बंध गयी। बापू ने हाथ से जाने का इशारा किया।

बापू पूरी रात संवाद की मानसिकता में रहे। पता नहीं कुछ ही समय पहले विदा हुई बा से उत्तर मिल रहा था या नहीं। यह एकालाप था। एकालाप आंतरिक वेदना की अभिव्यक्ति का प्रवाह अधिक होता है।

'अगर कभी देश की आजादी मिली तो तू मेरे साथ नहीं होगी...मैं अकेला हूंगा। तू ही समझती थी, आजादी का मतलब मेरे लिया क्या है। पता नहीं वह आजादी कितनी अधूरी या पूरी होगी? कितनों ने इस आजादी के लिए प्राण गंवाये...सबके लिए आजादी की अलग-अलग परिकल्पना रही होगी...उसे पाने की राह भी अलग होगी। तूने मेरे रास्ते को चुना और कंधे से कंधा मिलाकर चली, और चलाया भी। उस दिन भी जब मेरे बापू नहीं रहे थे...पहली बार समझा कि भोग कितना भूखा होता है...जो उसका पेट भरने में लग जाता है, स्वयं खाली रह जाता है। तब तूने ही सिखाया कि पहले अपने आपको, अपने से आजाद करो, मैं देश के साथ-साथ अपने को आजाद करने की लड़ाई भी लड़ता रहा...दोनों अधूरी हैं। लेकिन तेरा बलिदान... बलिदान से भी अधिक कुछ है, एक किरण जो निरंतर उसी तरफ दिशा-निर्देश कर रही है।

मैं अपनी बात कर रहा हूं! अभी रामदास और देवदास यहां से गये हैं। बहुत से आश्रमवासी भी आये थे। सब तेरे बिना कैसे बेसहारा हो गये हैं। हरि को तो कभी सहारा मिला ही नहीं...जो वह चाहता था, मैं नहीं कर पाया, जो मैंने चाहा, वह उससे विमुख हो गया। काश वह दक्षिण अफ्रीका का गांधी बन पाता...बन सकता था...मेरा संकल्प उसके काम नहीं आया। बच्चों की इच्छा मां-बाप पूरी करते हैं पर हम दोनों एक-दूसरे के बरक्स खड़े थे...क्यों? मेरी स्थिति उस संन्यासी की-सी थी, जो सर्व कल्याण के लिए समर्पित हो, पर अपनों के लिए बेगाना हो जाये। सिद्धांत जहां संकीर्णताओं से मुक्त करते हैं, वहां ऐसा बांधते हैं कि हिलने नहीं देते।...मैं जानता हूं तू दुःखी रहती थी, कभी मेरे कारण, कभी उसके कारण। वह तुझे बहुत मानता था। याद है, कटनी के स्टेशन पर वह तेरे लिए फल लेकर आया था...मुझसे कुछ ऐसा कहा था, तुम्हारे लिए नहीं लाया...तुम बहुत बड़े हो...बा ने तुम्हें बड़ा बनाया। मैंने जब तुमसे कहा, तुम भी तो उसे फल दो...तब तक गाड़ी चल दी। आज सोचता हूं कि उसने कितना सही कहा था। जो वह जान गया था, मैं नहीं जान पाया। तुमने मेरे कारण उसे त्याग दिया...मां का सबसे बड़ा दुःख, उसके बच्चों का भटकना और बिछड़ जाना होता है। मैं लाया नहीं...वह आया नहीं। तुझे याद है, मैंने तुझसे कहा था, सेवा और त्याग को अपना भविष्य बनाने वाले व्यक्ति को...एकला चलो...साधना चाहिए। तू नाराज भी हुई थी...मैंने कोशिश भी की, पर भटकता गया। तू स्थिर रही...सबके बीच में भी...। अब उन बातों से क्या लाभ...अपनी बनायी कीचड़ से निकलते-निकलते काफी समय लग गया। न तू कुछ कर सकी, और न मैं...।' तभी गेट पर पांच का घंटा बजा।

'यह तो सुबह हो गयी...पता नहीं मैं तुझे क्यों उन बातों में उलझाये रहा जो निष्क्रिय हो गयीं...जो मात्र छाया हैं, प्रलाप हैं। मेरा स्वार्थ...अब नहीं रोकूंगा...वहां भी तेरी प्रतीक्षा होगी...तेरे नये संसार में प्रतीक्षा की कोई परिकल्पना होगी...जैसे यहां सबको छूट जाने के बाद भी प्रतीक्षा बनी रहती है।'

बहुत दिन बाद वह आवाज सुनाई पड़ी थी। एक सूरदास कभी-कभी गेट पर आकर निर्गुनिया गाता था। बा खड़ी होकर सुना करती थी...

कागद लिखै सो कागदी, की व्यवहारी जीव,
आतम दृष्टि कहा लिखै, जित देखे तित पीव।
प्रीतम को पतिया लिखूं, जो कहुं होय विदेस,
तन में मन में नैन में, ताकौ कहा संदेस।

तन में मन में नैन में...बुदबुदाते, बापू अंदर चले गये। *...समाप्त*

... पृष्ठ 16 का शेष

ऑल-आउट लॉकडाउन के ख़तरे

जा सकता है। दूसरी ओर, कोई बड़ा स्वास्थ्य खतरा बचाते हुए गरीब लोगों की मदद करने वाली सेवाओं को यथासंभव कार्य करना जारी भी रखना चाहिए। यह न केवल स्वास्थ्य सेवाओं या सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर लागू होगा, बल्कि जिला और स्थानीय स्तर पर प्रशासनिक कार्यालयों सहित कई अन्य सार्वजनिक सेवाओं पर भी लागू होगा। गरीब लोग कई मायनों में इन सेवाओं पर निर्भर करते हैं, इस समय उन्हें पिंजड़े में बंद करना उन्हें परेशानी में डालने वाला होगा।

इस स्थिति में सार्वजनिक सेवाओं को बनाए रखने के लिए कुछ पहल और रचनात्मकता की आवश्यकता होती है। आवश्यक सेवाओं की एक स्पष्ट सूची और कार्यस्थल पर कोरोना वायरस से सावधानी पर आधिकारिक दिशानिर्देश एक अच्छी शुरुआत हो सकते हैं। कई सार्वजनिक परिसर बेहतर व्यवस्था के लिए रो रहे हैं। कुछ सेवाओं को तात्कालिक तौर पर अभी के लिए भी पुनर्निवेशित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, आंगनबाड़ियाँ इस समय सार्वजनिक-स्वास्थ्य की महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं, भले ही बच्चों को दूर रखा जाए। कई सार्वजनिक स्थलों का उपयोग, उचित सुरक्षा उपायों के साथ, सूचना का प्रसार करने, हाथ धोने आदि अच्छी आदतों को सिखाने/प्रसारित करने के लिए किया जा सकता है।

प्रभावी सामाजिक सुरक्षा उपायों की सहायता से हम मानव समाज के बृहद तंत्र की छोटी छोटी तंत्रिकाओं को बचाने में सफल हो पाएंगे। प्रक्रियाएं अभी जिस गति से चल रही हैं, आने वाले समय में परिस्थितियाँ और कठिन होने वाली हैं। राज्य को राशन वितरण और पानी की आपूर्ति को सुनिश्चित करना चाहिए। इनकी उपलब्धता में कमी कोरोना संकट और लॉकडाउन की दिक्कतों को और दुरूह करेगी। स्वास्थ्य और आर्थिक दोनों ही संकटों के लिए ये स्थिति ठीक नहीं साबित होगी। यह समय भारत के कमजोर सुरक्षा कवच को टूटने देने का नहीं, उसे और मजबूत करने का है। ❑

दुनिया के वे देश, जहां नहीं पहुंचा है कोरोना वायरस

यह खबर लिखे जाने तक दुनिया में कोरोना से मरने वालों की संख्या डेढ़ लाख के आसपास पहुंच रही है। लगभग 20 लाख 64 हजार मामले कनफर्म हो चुके हैं और लगभग 5 लाख 20 हजार लोग रिकवर हो चुके हैं। कोरोना वायरस इस समय दुनिया के तकरीबन सभी बड़े देशों में अपनी दस्तक दे चुका है. इस बीच कुछ छोटे देश या द्वीप ऐसे भी हैं जो अभी इस बीमारी से बचे हुए हैं.

worldometers.info नाम की वेबसाइट कोरोना वायरस को लेकर ताजा आंकड़े दुनिया भर को उपलब्ध करा रही है. इस वेबसाइट के मुताबिक अब तक कोरोना वायरस दुनिया के करीब 210 देशों में फैल चुका है. हालांकि बड़ी संख्या में देश ऐसे भी हैं, जहां पर संक्रमितों की संख्या दहाई के आंकड़े से भी कम है. संयुक्त राष्ट्र ने दुनिया भर में 197 देशों को मान्यता दे रखी है. अगर इस हिसाब से देखा जाए तो दुनियाभर में कुल 21 देश ही बचे हैं, जहां पर कोरोना वायरस अभी तक नहीं पहुंचा है.

दुनिया के ज्यादातर बड़े और ताकतवर देशों में इस बीमारी का प्रकोप फैला है. विशेष रूप से इटली, ब्रिटेन, स्पेन सहित अन्य यूरोपीय देशों में इसका अभी भीषण प्रभाव है. साथ ही अमेरिका के भी सभी राज्यों में कोरोना से प्रभावित रोगी मिले हैं.

दुनिया के जो देश अब भी इस बीमारी से बचे हुए हैं, उनमें से ज्यादातर बेहद छोटे हैं और वैश्विक रूप से कटे हुए हैं. इनमें से कई देशों के नाम ऐसे हैं, जिन्हें आम भारतीयों ने शायद ही सुना होगा. पलाऊ तुवालू, वानुआतू, तिमोर-लेस्टे, सोलोमन आईलैंड, सिएरा लियोनी, सामोआ, सैंट विंसेंट एंड ग्रेनाडिनीज, सैंट किटिस एंड नेविस, कोमोरोस, किरिबाती, लेसोथों, मार्शल आईलैंड, माइक्रोनेशिया, नारू, ताजिकिस्तान, टोंगा और तुर्कमेनिस्तान जैसे देशों में अभी तक कोरोना वायरस नहीं पहुंच पाया है.

1 और 2 रोगियों वाले देश : कोरोना का असर उन देशों पर ज्यादा पड़ा है, जहां पर दूसरे देशों के लोगों का आवागमन ज्यादा है. इसी वजह से दुनिया के ज्यादातर बड़े देश इसकी चपेट में बुरी तरह आ गए हैं. बहुत से देश ऐसे भी हैं, जहां एक या दो मरीज ही अभी तक हैं. फिजी, जांबिया, निकारागुआ, कांगो सहित अन्य कई देश हैं, जहां पर एक या दो मरीज हैं. भारत के पड़ोसी देश नेपाल और भूटान में भी अभी तक सिर्फ एक ही मरीज सामने आया है.

तीन देशों में सबसे ज्यादा मृतक : दुनिया भर के मृतकों की कुल संख्या का ज्यादातर हिस्सा चीन, इटली और ईरान से है. चीन से तो इस वायरस की शुरुआत ही हुई थी. लेकिन अब वहां पर नए मामले आने बिल्कुल खत्म हो गए हैं. अब इटली और ईरान इस बीमारी के दो बड़े केंद्र बिंदु बन गए हैं. ❑

गतिविधियां एवं समाचार

एक दिन का राष्ट्रीय उपवास

43 करोड़ असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के साथ एकजुटता जाहिर करने के लिए देश के 25 से भी अधिक राज्यों के सामाजिक कार्यकर्ताओं,जनान्दोलनों से जुड़े संगठनों और गांधीजनों ने 10 अप्रैल को 'जो जहाँ है, वहीं पर रह कर' सुबह 6 बजे से शाम 6 बजे तक उपवास रखा।कोरोना महामारी के कारण हुए लाकडाऊन का सबसे मारक असर बेघर लोगों पर पड़ा है,इस लाकडाऊन का असर व्यापक रूप से प्रवासी मजदूरों, निर्माण कार्य में लगे मजदूरों , दिहाड़ी मजदूरों, ठेका मजदूरों, दैनिक मजदूरों आदि पर सर्वाधिक पड़ा है, जिनके रोजगार का स्रोत ही समाप्त हो गया है । ठेले वाले, सब्जी वाले, रेहड़ी वाले भूखों मरने की स्थिति में पहुंच गए हैं। देश भर में हुए उपवास करने वालों में प्रमुख 102 वर्षीय स्वतंत्रता संग्राम सेनानी दुरैस्वामी (बंगलुरु), 97 वर्षीय डॉ. जीजी पारिख (मुंबई), प्रख्यात इतिहासकार रामचन्द गुहा , नर्मदा बचाओ आंदोलन की नेत्री मेधा पाटेकर, समता संदेश के सम्पादक हिम्मत सेठ (उदयपुर), कृषि विशेषज्ञ डॉ. वंदना शिवा, जल पुरुष राजेन्द्र सिंह सहित लखनऊ में वरिष्ठ पत्रकार एवं सोशलिस्ट चिन्तक आनन्दवर्धन सिंह, एडवोकेट वीरेंद्र त्रिपाठी, सोशलिस्ट फाउंडेशन के अध्यक्ष राम किशोर, वरिष्ठ नागरिक परिषद के संयोजक के के शुक्ला, चिंतक और विचारक प्रो. एसएस जाफरी, शहीद स्मृति मंच के संजय खान व सतीश श्रीवास्तव ने भी दिन भर उपवास रख कर अपनी एकजुटता प्रदर्शित की। **–रामकिशोर**

बा की जयंती सम्पन्न

गांधी स्मारक निधि, पंजाब, हरियाणा व हिमाचल प्रदेश तथा आचार्यकुल चण्डीगढ़ के तत्वाधान में कस्तूरबा गांधी की 150वीं जयंती श्रद्धापूर्वक मनायी गई। जयंती समारोह का शुभारम्भ सामूहिक सफाई अभियान से हुआ, जिसमें गांधी स्मारक निधि के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। मुख्यवक्ता डा. देवराज त्यागी ने श्रद्धांजलि देते हुए कहा कि बा बहुत दृढ़ इच्छा वाली थीं। अफ्रीका जाने बाद गांधी जी की तरह ही उन्होंने अपने जीवन को सादा बना लिया था। गांधी जी ने कहा था कि यदि मुझे कभी भी अपने जीवनसाथी का चुनाव करना पड़े, तो मैं कस्तूरबा को ही चुनूंगा। बापू का यह कथन बा की महिमा बता रहा है। बापू के ऐतिहासिक कार्य में बा का जो हिस्सा रहा, उसका स्मरण भारत सदैव करता रहेगा। गांधी जी की तरह ही कस्तूरबा गांधी ने अफ्रीका तथा भारत में देश की स्वतन्त्रता के लिए कई बार जेल काटी और जेल में ही अन्तिम सांस ली।

के. के. शारदा ने कस्तूरबा गांधी के जन्म दिवस के अवसर पर सभी कार्यकर्ताओं को बधाई दी। प्रेम विज वरिष्ठ उपाध्यक्ष आचार्यकुल ने भी फोन पर जन्म दिवस की बधाई देते हुए कस्तूरबा गांधी को नमन किया तथा उनके आदर्शों पर चलने की शपथ ली। लॉकडाउन के कारण ज्यादा लोगों को बुलाया नहीं गया था तथा दूर-दूर बैठने का प्रावधान रखा गया था। **–डा. देवराज त्यागी**

बा की 151वीं जयंती मनाई

'बा' की 151 वीं जयंती का आयोजन गांधी स्टडी सर्कल के कार्यकर्ताओं व स्थानीय गांधीजनों द्वारा अपने अपने घरों में किया गया। कार्यक्रम में प्रातः सर्व धर्म प्रार्थना, कस्तूरबा जी के प्रिय भजन 'हरि ने भजता है जी कोई नी लाज जाती नथी जाणी रे' का गायन तथा उनके चित्र पर माल्यार्पण हुआ। तत्पश्चात कस्तूरबा पर लिखे साहित्य का वाचन किया गया। शाम को डा. शोभना राधाकृष्ण द्वारा आनलाईन 'कस्तूरबा कथा' का आयोजन व प्रसारण हुआ, जिसे पूरे देश भर में देखा गया। कार्यकर्ताओं ने जोधपुर शहर व ग्रामीण क्षेत्र में अपने घरों में इस कार्यक्रम का आयोजन किया। इस अवसर पर सर्वोदय मित्र राधिका, संतोष छापर, अशोक चौधरी व अन्य गांधीजनों ने उपवास रखा। **-अशोक चौधरी**

'Sarvodaya Jagat' Hindi Fortnightly
Registered under RNI No. 35495/78, Postal Registration No. VSI-(E) 04, Valid upto 31 December 2020
Issued by S.S.P.O. Varanasi (East Division)

कविता

संत विनोबा पुण्य-यज्ञ भूदान कराने आये हैं

❑ राजेन्द्र प्रसाद शुक्ल

संत विनोबा पुण्य-यज्ञ भूदान कराने आये हैं,
गाँव-गाँव में अमर प्रेम की अलख जगाने आये हैं।
ग्राम निवासी भाई-भाई धन वाले और दीन किसान,
दोनों धरती पर ही जीते मरते दोनों एक समान।
भूख-प्यास दोनों को लगती सबका एक वही भगवान,
किन्तु एक है मौज उड़ाता एक सदा होता बलिदान।
दो भाई के बीच भेद की भीत ढहाने आये हैं।
बेजमीन मजदूरों को हम भूमि दिलाने आये हैं।
गाँव-गाँव में अमर प्रेम की अलख जगाने आये हैं।

ऐ अमीर! तुमको तो प्रभु ने लक्ष्मी का वरदान दिया,
किन्तु आज तक तुमने प्रभु को क्या कुछ भी प्रतिदान दिया?
अरे, तुम्हारे ही पड़ोस में भूखा नित प्रभु सोता है,
और दरिद्रों की काया में राम हमारा रोता है।
आग भरे प्रभु के आँसू से सबक सिखाने आये हैं,
हिंसा की खूनी ज्वाला से इंसान बचाने आये हैं।
गाँव-गाँव में अमर प्रेम की अलख जगाने आये हैं।

है अनीति यह धरती पर जो एक बिना श्रम, राज करे,
और परिश्रम करके दूजा रोटी को मुहताज फिरे।
दो जमीन अब उसको भाई जो भू पर जान निसार रहा,
हवा, धूप और पानी पर कब किसका है अधिकार रहा?
जियो और जीने दो सबको, यह समझाने आये हैं,
जन-मन के घने कुहासे में हम सूर्य उगाने आये हैं।
गाँव-गाँव में अमर प्रेम की अलख जगाने आये हैं।

चेत उठो अब नया जमाना आ करके दम लेगा भाई,
नहीं चलेगी अब आगे से शोषण की ये मौज कमाई।
आज प्रेम से माँग रहे हैं भू-संपति तुम दे डालो,
धरती का बेटा जागा है उसे प्रेम से गले लगा लो।
आज अहिंसक इंकलाब का शंख बजाने आये हैं।
नयी व्यवस्था का देखो निर्माण कराने आये हैं।
गाँव-गाँव मे अमर प्रेम की अलख जगाने आये हैं।

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए प्रकाशक अरविन्द अंजुम द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार।